खंड 2
अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान के विभिन्न क्षेत्र-I

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 4 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान एवं विकास*

इकाई की रूपरेखा

4.0 परिचय

4.1 विकास का ऐतिहासिक आधार

4.2 विकास में मानवशास्त्रीय संलिप्तता

4.3 स्थायी विकास के लक्ष्य

4.4 सारांश एवं निष्कर्ष

4.5 संदर्भ

4.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

अधिगम के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के उपरांतशिक्षार्थी निम्न बातें जानने में सक्षम होंगे:

- विकास की अवधारणा में वैचारिक प्रगति को परिभाषित करने में,
- घटनाक्रमों के माध्यम से मानव वैज्ञानिक कार्य की व्याख्या करने में,
- विकास आधारित मानवविज्ञान एवं विकास के मानवविज्ञान की संगति पर चर्चा करने,तथा
- स्थायी विकास के लक्ष्यों पर आधारित विमर्श करने में ।

4.0 परिचय

"मानवविज्ञानी और विकास के विचारों और प्रथाओं का दुनिया के बीच संबंध औपनिवेशिक काल के दौरान अनुशासन के शुरुआती दिनों से हैं और विभिन्न रूपों में, वर्तमान तक जारी है। इस तरह के संबंधों ने सहानुभूतिपूर्ण भागीदारी की स्थिति के साथ–साथ विच्छेदित आलोचना या यहां तक कि एकमुश्त शत्रुता के रुख से अनुसंधान और कार्य क्षेत्रों को शामिल किया है।

मानवविज्ञानी विकास के बारे में जो भी दृष्टिकोण रखते हों, विकास की अवधारणा, अपने आप में एक विविध और अत्यधिक विवादित शब्द है जो हमारे युग के केंद्रीय आयोजन और परिभाषित प्रणालियों में से एक है। इसलिए इस विषय पर मानवशास्त्रीय ध्यान देने की मांग जारी रहेगी (लूइस, 2005:2)"। इसे परिप्रेक्ष्य में रखते हुए किसी को यह महसूस करना होगा कि विकास एक अवधारणा है जो आज समाज में एक प्रमुख प्रेरक शक्ति है, हालांकि, इसकी उपयोगिता को अनुकूलित करने के लिए प्रासंगिक वास्तविकताओं के संदर्भ में लगातार विमर्श और संघर्ष की आवश्यकता है। इस प्रकार की प्रतियोगिताएं मानवविज्ञान के अंतर्गत ही ध्यान देने योग्य दो प्रकार के विशिष्ट क्षेत्रों को बढ़ावा देती हैं, एक वह जो विकास की अवधारणा की ओर एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण रखती है तथा विकास एवं उसमे विसंगतियों को समझने हेतु मापदंड एवं संकल्पन को निरंतर चुनौती देती रहती है। समग्र नीति श्रृंखला को

* डॉ. इंद्राणी मुखर्जी पोस्ट–डॉक्टोरल फेलो, मानवविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सम्मिलित करने के लिए एक बहु–विषयक परिप्रेक्ष्य में विकास के इस आलोचनात्मक विश्लेषण का अध्ययन विकास के मानवविज्ञान के अंतर्गत किया जाता है। दूसरा, विशेष ध्यान देने योग्य क्षेत्र विकास आधारित मानवविज्ञान है, जो कि अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान पर आधारित है। अमेरीकन एंन्थ्रोपोलोजिकल एसोशिएशन (जैसा कि विकास आधारित मानवविज्ञान की प्रशिक्षण नियमावली में परिभाषित है) के अनुसार, विकासात्मक मानवविज्ञान विकास परियोजना चक्र के भीतर महत्वपूर्ण अनुप्रयोगों के साथ वैज्ञानिक अनुसंधान है। इसका उद्देश्य विकास आधारित प्रयासों में संलिप्त एवं उनसे प्रभावित मानव समुदायों के लिए फ़ायदों को संवर्धित करना एवं नकारात्मक परिणामों की रोकथाम करना है। मानवविज्ञानी विकास आधारित परियोजनाओं में विविध रूप से संलिप्त हैं, जिनमें से कुछ विशिष्ट भूमिकाएँ किसी परियोजना के जीवन चक्र में आने वाली विशेष अवस्था द्वारा टुकड़ों में निर्धारित की जाती हैं (पार्टरीज़ 1984:1)। इस परिस्थिति में मानववैज्ञानिकों का सीधा संबंध किसी विकास आधारित योजना के कार्यान्वयन पहलुओं के साथ होता है, परंतु यह शोधकर्ताओं के दायरे को सीमित करता है चूंकि कोई भी योजना विभिन्न मापदण्डों द्वारा नियंत्रित होती है, जिनमें केवल प्राथमिक रूप से संसाधनों के हस्तांतरण वाली विकास आधारित सहायता की बाह्यता ही निहित नहीं होती है, बल्कि उसमें मानकों के साथ साथ फूको (1994:237) द्वारा संदर्भित 'आचरण का व्यवहार' भी सम्मिलित है। अतः, योजना चक्र के विभिन्न चरणों में विकास आधारित योजना स्वतः सहायता/सहयोग प्रदान करने वाली किसी संस्था विशेष एवं उनके प्रबंधन करने की संहिता द्वारा नियंत्रित अथवा प्रभावित होती है। इस प्रकार, मानवविज्ञानी प्रायः स्वयं को एक ऐसे तराजू पर खड़ा पाते हैं, जो कि सत्तात्मक राजनीति आधारित असमानता के कारण उनके विरुद्ध झुका होता है। इस मुद्दे का एक मुश्त समाधान विकास आधारित मानवविज्ञान के क्षेत्र में पाया जा सकता है जो वैश्विक नीतियों के उस नृवंशविज्ञानी अनुसंधान के बारे में बात करता है जिसमें समग्र नीति श्रृंखला पर ध्यान केन्द्रित करने की चुनौती होती है–विकास एजेंसियों के संदर्भ में विकास नीति मॉडल के उत्पादन से लेकर विभिन्न निष्पादन बिंदुओं तक (उदाहरण के लिए, प्राप्तकर्ता देशों में राज्य मंत्रालय और बड़े अंतरराष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन) और स्थानीय हस्तक्षेप के केंद्रो तक। जैसा कि, विकास नीति दुनिया के उत्पादन (वैश्विक और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ज्ञान उत्पादन) के समकालीन रूपों में से एक के रूप में उभरती है।

यहाँ पर हमें इस बात का संज्ञान लेना होगा कि विकास का मानवविज्ञान एवं विकास आधारित मानवविज्ञान , मानवविज्ञान के वह क्षेत्र हैं जो एक दूसरे के पूरक हैं तथा एक निरंतरता बनाए रखते हैं। विकास आधारित आलोचनात्मक विचार–विमर्श की सहायता से ही हम इस संकल्पना की प्रभावशीलता में योगदान दे सकते हैं, जबकि नृवंशविज्ञानी परिस्थितियों में विकास आधारित कार्यों का कार्यान्वयन आलोचनात्मक प्रतिबिंबों एवं विकास आधारित कार्यों की समीक्षा के लिए स्वतः जिम्मेदार रहा है। कुछ लोगों का तर्क है कि मानवविज्ञानी को स्थानीय लोगों के साथ काम करने के लिए विकास संबंधी विमर्श में शामिल होना अनिवार्य है ताकि वे परिवर्तन के लिए उनकी जरूरतों और विचारों का आकलन कर सकें या स्थानीय, समुदाय–विशिष्ट पहल की वकालत कर सकें। कुछ मानवविज्ञानी यह भी सुझाव देते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय विकास आधारित संस्थाओं के साथ काम न करके, बल्कि उन्हें स्वदेशी अधिकार आंदोलनों में संलिप्त होना चाहिए। कुछ विद्वान सुझाव देते हैं कि मानवविज्ञानी विकास प्रणाली को बेहतर ढंग से समझने के लिए छोटे और बड़े दोनों विकास संस्थानों का अध्ययन

करते हैं। मानवशास्त्रीय डेटा यह सुनिश्चित करने में सहायक है कि विकास परियोजनाएं कैसे सामाजिक और आर्थिक लाभ को अधिकतम करने में मदद कर सकती है और यह भी कि परियोजनाएं सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त हैं, स्थानीय जरूरतों का जवाब देती हैं, परियोजना में उपयुक्त स्थानीय सामाजिक कर्ता और संगठनों को शामिल करती हैं, और स्वभावगत रूप से लचीली होती हैं (गेजेन और कोट्टक, 2014)।

विकास के साथ मानवशास्त्रीय जुड़ाव के इस सामान्य स्थान को देखने के बाद, आइए देखें कि विकास की अवधारणा ने कैसे लोकप्रियता हासिल की और कैसे विकास के साथ मानवशास्त्रीय जुड़ाव का निर्माण किया।

4.1 विकास का ऐतिहासिक आधार

"'विकास' ने अपने आधुनिक अर्थ में आधिकारिक प्रमुखता पहली बार तब प्राप्त की जब संयुक्त राष्ट्र के राष्ट्रपति ट्रूमन ने इसका उपयोग 1949 में अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहायता के प्रावधान एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के आधार पर संसार के 'अविकसित' क्षेत्रों में युद्धोत्तर पुनर्निर्माण कार्य के तर्काधार के रूप में किया। तत्पश्चात, विकास मुख्य रूप से आर्थिक उन्नति के साथ प्रगाढ़ रूप से संबद्ध हो गया है।"(लूइस, 2005:2)

20 जनवरी, 1949 को संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति हैरी ट्रूमैन के उद्घाटन भाषण के अंश "दुनिया के आधे से अधिक लोग दुख की स्थिति में रह रहे हैं। उनका भोजन अपर्याप्त है, वे बीमारी के शिकार हैं। उनका आर्थिक जीवन आदिम और स्थिर है। उनकी गरीबी उनके लिए और अधिक समृद्ध क्षेत्रों के लिए एक बाधा और खतरा है। इतिहास में पहली बार मानवता के पास इन लोगों की पीड़ा को दूर करने का ज्ञान और कौशल है। . . . मेरा मानना है कि हमें शांतिप्रिय लोगों को अपने तकनीकी ज्ञान के भंडार का लाभ उपलब्ध कराना चाहिए ताकि उन्हें बेहतर जीवन के लिए उनकी आकांक्षाओं को साकार करने में मदद मिल सके। . . . हम जिस चीज की परिकल्पना करते हैं वह लोकतांत्रिक निष्पक्ष व्यवहार की अवधारणाओं पर आधारित विकास का एक कार्यक्रम है। अधिक उत्पादन समृद्धि और शांति की कुंजी है। और अधिक से अधिक उत्पादन की कुंजी आधुनिक वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान का व्यापक और अधिक जोरदार अनुप्रयोग है"।

स्रोतः https://avalon.law.yale.edu/20th_century/truman.asp (24.6.2020 at 10.53पर देखा गया)

विकास का विचार जो प्रस्तावित किया जा रहा था, उस समय संयुक्त राष्ट्र के सामाजिक और आर्थिक मामलों के विभाग की टिप्पणी में अच्छी तरह से परिलक्षित होता था, जिसमे लिखा था "एक धारणा के अनुसार तीव्र आर्थिक उन्नति कष्टपूर्ण सामंजस्य के बिना में असंभव है। प्राचीन दर्शन को ख़त्म करना होगा; पुराने सामाजिक संस्थानों का विघटन होगा; जाति, संप्रदाय एवं वंश आधारित बंधनों को तोड़ना होगा; तथा बड़ी संख्या में वह लोग जो उन्नति के साथ सामंजस्य बैठा कर नहीं चल सकते, उन्हे आरामदायक जीवन की कामनाओं हेतु निराश रहना पड़ेगा।

बहुत कम समुदाय ही आर्थिक उन्नति के लिए पूरी कीमत चुकाने के लिए तैयार हैं"।(संयुक्त राष्ट्र, सामाजिक एवं आर्थिक विषय विभाग, 1951:15)

इन दो संभाषणों के माध्यम से आपको यह स्पष्ट हो जाना चाहिए (अर्थात अविकसित देशों तक पहुँच बनाने के लिए राष्ट्रपति ट्रूमन का अहवाहन तथा आर्थिक विकास के लिए बलिदान करने की आवश्यकता के लिए संयुक्त राष्ट्र, सामाजिक एवं आर्थिक विषय विभाग की स्पष्ट समझ) कि द्वितीय विश्व युद्ध पश्चात विजेताओं ने अपने आपको श्रेष्ठता की एक प्रजातिकेंद्रित स्थिति में रखा जहां पर उन्हें दूसरे ऐसे देशों की सहायता करने की आवश्यकता का आभास हुआ जिनके बारे में उन्हें लगता था कि उन्हें अत्यधिक सहायता कि आवश्यकता है। इस परिस्थिति ने विभिन्न देशों को सुप्रसिद्ध सीमांकन 'पहली दुनिया'(पश्चिमी पूंजीवादी), 'दूसरी दुनिया'(सोवियत, पूर्वी गुट एवं अन्य समाजवादी क्षेत्र) तथा 'तीसरी दुनिया'(बाकी बचे हुए) द्वारा विकास आधारित चरणों के एक कार्यक्रम में संलिप्त कर दिया। लूइस ने अपने लेख में इस बात की ओर इशारा भी किया है जहां वे लिखते हैं कि, "एक विशेषण के रूप में, 'विकास' से तात्पर्य एक ऐसे मानक से है जिससे उन्नति की भिन्न–भिन्न गतियों की तुलना की जा सकती है, तथा इसलिए यह एक व्यक्ति–निष्ठ, पूर्वाग्रही तत्त्व समाहित कर लेता है, जिसमें समाजों अथवा समुदायों की तुलना यदा–कदा की जाती है तथा तत्पश्चात एक क्रमिकविकास आधारित योजनाओं के विभिन्न 'चरणों' में इसे अवस्थित किया जाता है। वास्तव में, विकास को बहुधा डार्विन की शब्दावली के अंतर्गत जैविक वृद्धि एवं क्रमिकविकास के लिए एक जीवविज्ञानिक लक्षण के रूप में समझा जाता है, जबकि दुर्खीम के अभिप्राय के आधार पर इसे ऐसी अवधारणाओं से जोड़कर देखा जा सकता है जो 'परंपरागत' से 'आधुनिक' बन रहे समाजों में आने वाले परिवर्तनों में बढ़ती सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक जटिलताओं से संबद्ध हैं"। (लूइस 2005:3)

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की विकास की संकल्पना संयुक्त राष्ट्र के अर्थशास्त्री डब्लू. डब्लू. रोस्टोव के आधुनिकीकरण सिद्धान्त से मेल खाती है। इसने यह प्रस्तावित किया कि आर्थिक उन्नति गरीब तक 'बूंद–बूंद करके' पहुंचेगी, जबकि नयी तकनीक का हस्तांतरण भौतिक लाभ पहुंचाएगा। उन्होंने यह तर्क दिया कि विकास के चरणों की एक श्रृंखला थी जिसके माध्यम से परंपरागत, निम्न–आय समाजों में हरकत आई, एवं अंततः वह 'उड़ान भरने' की एक परिस्थिति में पहुंचे, जो उन्हें आर्थिक निवेश, उन्नत अभिशासन एवं आधुनिक तकनीकों के आधार पर परिणामस्वरूप उन्नति के एक आत्मनिर्भर मार्ग पर ले जाएगा। इस अवधारणा ने कुछ हद तक विकास के केन्द्रीय विषय पर पकड़ बना ली है, हालांकि इस सिद्धान्त को स्वयं विकास के एक स्थिर मार्ग के रूप में मान्यता मिली, चूंकि समय बीतने के साथ–साथ दूसरे भू–राजनैतिक पहलुओं को मान्यता मिलने लगी, इसने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नियमों में आए सुधारों और धनाड्य विकसित 'उत्तर' तथा एक गरीब, निम्न–विकसित 'दक्षिण' जिसकी व्युत्पत्ति 1980 संयुक्त राष्ट्र द्वारा पोषित ब्रांडट कमीशन की रिपोर्ट में है, के बीच मुद्रा के मुक्त संचालन में ही विकास को चिन्हित किया गया। विकास आधारित सिद्धांतवादियों की 'अधीनता' विचारधारा में ऐतिहासिक एवं राजनैतिक तथ्यों पर मजबूती के साथ ज़ोर दिया गया, जो कट्टरपंथी विद्वानों के एकजुट होने का कारण बना। इसने आधुनिकीकरण स्वरूप को अस्वीकृत किया तथा इसके बजाय उत्तर एवं दक्षिण के बीच असमान रिश्ते पर, जो कि व्यापार की शर्तों के आधार पर था, ने इस बात पर ज़ोर दिया कि परिधीय अर्थव्यवस्थाएं पूंजीवादी प्रणाली में असमान शर्तों के आधार पर संघटित की गयी थीं, जिसके कारण 'अल्पविकास' की एक सक्रिय प्रक्रिया अस्तित्व में

आई है, जबकि प्राथमिक रूप से वह धनाड्य औद्योगिक देशों को सस्ता कच्चा माल निर्यात करने वाले प्रदाता थे। अधीनता सिद्धान्त की आलोचना उसके अति–सरलीकरण होने के कारण भी होती रही । इसने विकास के दृष्टिकोण को विश्व प्रणाली परिप्रेक्ष्य की ओर मोड़ दिया। विश्व प्रणाली सिद्धान्त, समाजशास्त्री इमैनुअल वालरस्टीन द्वारा वैश्विक इतिहास एवं सामाजिक परिवर्तन की ओर विकसित एक दृष्टिकोण है जो इस बात का सुझाव देता है कि एक विश्व आर्थिक प्रणाली है जिसमें कुछ देशों का लाभ होता है जबकि कुछ देशों का शोषण होता है, हालांकि, इस दृष्टिकोण ने आर्थिक शक्ति में बदलाव/परिवर्तन आने के लिए नए द्वार खोल दिये जिससे इस दृष्टिकोण का स्वभाव और अधिक गतिशील हो गया। जहां विश्व आर्थिक प्रणालियों में आर्थिक सम्बन्धों के आधार पर विकास आधारित प्रयास जारी थे, वहीं पर विकास में सामाजिक आयाम के समावेशित किए जाने की अनुभूति भी की जा रही थी। एक अंतर्राष्ट्रीय समिति ने विकास के संकेतकों के गठन हेतु निम्नलिखित मदों को सम्मिलित करने की अनुशंसा कीः स्वास्थ्य, जनसांख्यिकीय स्थितियां; भोजन एवं पोषण; शिक्षा, साक्षरता और कौशल; काम करने की परिस्थिति; रोजगार की स्थिति; कुल खपत और बचत; परिवहन सेवा; घर, घरेलू सुविधाओं सहित; कपड़ा; मनोविनोद एवं मनोरंजन; सामाजिक सुरक्षा; तथा मानव स्वतन्त्रता (यूएनआरएसआईडी, 1972)। इस प्रकार, जबकि आर्थिक और तकनीकी प्रगति का महत्व विकास के अभिन्न मानदंड बना रहा, सामाजिक और बाद में सांस्कृतिक आयामों के महत्व के लिए भी मान्यता शुरू हुई, विकास में मानवशास्त्रीय जुड़ाव या संलिप्तता की आवश्यकता को सबसे आगे रखा गया।

अपनी प्रगति जांचें

1) विकास आधारित मानवविज्ञान एवं विकास के मानवविज्ञान में क्या संबंध है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) मानवविज्ञानी विकास के साथ कैसे जुड़े हैं?

.....

.....

.....

.....

3) आधुनिक अर्थो में विकास कैसे सर्वप्रथम संकल्पित/निर्मित हुआ?

.....

.....

.....

.....

4.2 विकास में मानवशास्त्रीय संलिप्तता

मानवविज्ञानी सामाजिक परिवर्तन के व्यावहारिक पहलुओं में पूर्व–औपनिवेशिक काल से संलिप्त हैं, जहां उन्हें उपनिवेशियों के प्रतिनिधि के रूप में देखा जाता था, जिससे उपनिवेश प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती थी तथा जो संबन्धित विशेषाधिकारों के साथ वहाँ गए। हालांकि, मानवविज्ञानियों के लिए बनाए गए इस नियम में बोआस जैसे कुछ अपवाद भी थे, जिन्होने नस्लवाद के खिलाफ लड़ते हुए अपने जीवन का अधिकांश भाग बिता दिया। उन्होंने प्रथम विश्व युद्ध के खिलाफ, अमरीका में इसके परिणामस्वरूप फैलती विदेशी लोगों के प्रति घृणा की भावना तथा युद्ध–प्रियता के खिलाफ़ आवाज़ उठाई, और दृढ़ता के साथ आप्रवासियों एवं अफ्रीकन अमरीकन के अधिकारों के समर्थन में आगे आए। इसी प्रकार, सामाजिक परिवर्तन एवं विकास कार्य के अनुसार मानवविज्ञानियों के विभिन्न पद होते थे। ब्रोनिसलो मलिनोवस्की ने अपनी पुस्तक *द डाइनैमिक्स ऑफ कल्चर चेंजः एन एंक्वायरी इंटू रेस रिलेशन्स इन अफ्रीका*, 1976 में यह कहा कि "दुर्भाग्यवश, कुछ समूहों में एक बहुत ही मजबूत परंतु गलत धारणा बनी हुई है कि व्यावहारिक मानवविज्ञान मूलतः सैद्धांतिक अथवा शैक्षिक मानवविज्ञान से भिन्न है। सत्य यह है कि विज्ञान उपयोग के साथ ही शुरू होता है। विज्ञान में उपयोग क्या है तथा "सिद्धान्त" कब प्रायौगिक बन जाता है? जब यह हमें अनुभवजन्य वास्तविकता पर पकड़ बनाने देता है"। इनके ही विचारों के समान प्रतिध्वनि मार्गरेट मीड के विचारों में आती है जो कि व्यावहारिक मानवविज्ञान के लिए बनी संस्था के संथापक सदस्य थी और उन्होंने अपने व्यावसायिक जीवन का अधिकतर समय अमरीका में महत्त्वपूर्ण घरेलू मुद्दों को संबोधित करते हुए बिताया। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान, मीड ने अनेकों व्यावहारिक परियोजनाओं पर काम करते हुए युद्ध प्रयास में सहयोग दिया, मीड को यह भी विश्वास था कि, "मानवविज्ञान का, मानव के विज्ञान के रूप में, एक उत्तरदायित्त्व है जिसे.... जिससे हम कभी बच नहीं सकते" (1964:12)। अपनी पुस्तक *कल्चरल पैटर्न्स एंड टेक्निकल चेंज* (1955) में, मीड ने पूछा है कि तकनीकी परिवर्तन "मानव मूल्य जिस प्रकार से संरक्षित हैं, उस सांस्कृतिक बनावट के साथ" कैसे लाया जा सकता है (1955:)। ऐसी बातों के बारे में सोचते हुए वह कहती हैं कि "परिवर्तनकाल से गुज़र रही एक वैश्विक आबादी के मानसिक स्वास्थ्य को बचाना" यह अनिवार्य है (1955: v)। यह सब लूइस द्वारा दी गयी विकास आधारित व्यापक अवधारणा के निर्माण में सहायक सिद्ध होता है, जिसमें वह कहते हैं "विकास" भी 'संयोजित सामाजिक परिवर्तन' से तथा एक समूह द्वारा दूसरे के मामलों में बाहरी हस्तक्षेप की अवधारणा से जुड़ा हुआ है। बहुधा, यह किसी अल्प–विकसित समुदाय अथवा देश में सकारात्मक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से बाहरी लोगों द्वारा किए जाने वाले सचेत प्रयासों के रूप में, एक परियोजना के रूप में होता है"(लूइस, 2005:3)। जबकि एक तरफ विकास को एक सकारात्मक परिवर्तन के रूप में प्रतिबिम्बित किया गया है, वहीं "कट्टरवादी आलोचकों, के अनुसार, विकास को शक्ति एवं अभ्यास की एक व्यवस्थित प्रणाली के रूप में देखा गया है, जो पश्चिम द्वारा अधिक गरीब देशों पर औपनिवेशिक एवं नव–औपनिवेशिक प्रभुत्त्व का हिस्सा बन गया है" (लूइस 2005:3)।

विकास के साथ मानव वैज्ञानिक संलिप्तता एक पहेली के रूप में सामने आती है जिसमें गृल्लो कहते हैं कि "मानवविज्ञान एवं विकास के बीच संबंध लंबे समय से कठिनाई भरा रहा है, लगभग तब से जब से ब्रोनिसलो मलिनोवस्की ने मानवविज्ञानियों

की भूमिका का समर्थन अफ्रीकन औपनिवेशिक प्रशासकों के नीति सलाहकार के रूप में किया तथा इवांस–प्रिचर्ड ने उन्हें ठीक इसका उल्टा करने का और नीति एवं 'व्यावहारिक' संलिप्तता की भ्रष्ट दुनिया से खुद को दूर रहने का आग्रह किया" (गृल्लों 2002, लूइस में, 2005:1)। इवांस–प्रिचर्ड, व्यावहारिक मामलों में मानवविज्ञानी ज्ञान के उपयोग के विषय में वहाँ वास्तव में कुछ भी गलत नहीं था; परंतु यदि यह सचमुच इतना व्यावहारिक था, तो मानवविज्ञानी को इस बात का आभास होना चाहिए था कि वह "मानवविज्ञानी विषयक्षेत्र में नहीं, बल्कि प्रशासन के एक गैर–वैज्ञानिक विषयक्षेत्र में काम कर रहा थे" (इवांस–प्रिचर्ड 1946:93 एस्कोबर में, 1991)। जबकि कुछ मानवविज्ञानी इन विचारों का विरोध करते रहे, वहीं ल्यूसी माइर जैसे अन्य ने बड़ी स्थितिगत दुविधाओं की ओर इशारा किया, वह कहती हैं कि "हमने अफ्रीकन संस्कृतियों के लिए इसके आलोचकों के विरुद्ध तथा कट्टरवादी परिवर्तन के लिए उद्देशित नीतियों के विरुद्ध अपने आपको उनका रक्षक बना लिया है.....हम कहते थे कि लोगों को यूरोप में आई औद्योगिक क्रांति से कुछ सीखना चाहिए और अफ्रीका को इसकी अपनी भयावहता के साथ छोड़ देना चाहिए। मुझे अंदाज़ा नहीं है कि इस बात के द्वारा मेरा क्या अर्थ है ..... लोग आज के दौर में इस तरह से सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन नहीं करते.....। मुझे लगता है कि यह सच है कि हम स्वतंत्र अफ्रीका में हो रहे परिवर्तनों को भिन्न–भिन्न प्रकार से देखते हैं, और यह सच और तेज़ी से परिवर्तन लाने के इच्छुक अफ्रीका के नए नेताओं की अधीरता से अछूता नहीं है....क्या हम सच में इतने अवसरवादी हैं कि जब जब सत्ता बदलती है तब तब हम अपने विचार बदलते हैं"(माइर. 1965)।

समय बीतने के साथ मानव विज्ञानियों ने विकास एवं परिवर्तन के विषय में अपनी संलिप्तता के लिए भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण रखे हैं। हालांकि, विकास आधारित चर्चा में उनकी संलिप्तता तब प्रारम्भ हुई जब विकास के लिए आर्थिक रूप से उन्मुख दृष्टिकोणों की प्रत्यक्ष विफलता ने 1970 के दशक के प्रारम्भ से विकास के "सामाजिक" पहलुओं एवं लक्ष्यों जैसे स्वास्थ्य, घर, शिक्षा इत्यादि के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता को जन्म दिया। उन सांस्कृतिक पहलुओं को भी इसके बाद पहचान मिलने लगी थी, जिसे 1970 के दशक तक शुद्ध रूप से एक अवशिष्ट श्रेणी समझा जाता था, चूंकि "परंपरागत" समाज "आधुनिक" होने की प्रक्रिया में थे। हालांकि, सांस्कृतिक विरोध विकास कार्य में स्वाभाविक रूप से समस्या बना रहा। और इसके साथ ही स्थानीय समुदायों पर विकास परियोजनाओं के पड़ रहे असर तथा कार्यक्रमों के लिए आवश्यक स्थानीय ज्ञान प्रणालियों के महत्त्व को समझने के लिए सांस्कृतिक पहलुओं का संज्ञान लेने की आवश्यकता की पहचान बढ़ रही थी। विकासप्रक्रिया में सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं पर बल देने से मानवविज्ञानियों के लिए अभूतपूर्व संभावनाओं के नये द्वार खुले। तकनीक एवं पूंजी आधारित ऊपर से नीचे की ओर केन्द्रित प्रयासों के बुरे नतीजों से असंतुष्ट, विकासप्रक्रिया में संलिप्त विशेषज्ञों एवं संस्थाओं ने अपने कार्यक्रमों में सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों के प्रति एक नयी संवेदनशीलता को विकसित किया; हालांकि, विकास आधारित प्रयासों में कोई परिवर्तन नहीं आया। नयी नीतियों ने जो कि अभी भी आधुनिकीकरण की मांग कर रही थी, तकनीक एवं प्रकृति का शोषण करते हुए भौतिक उन्नति के अपने भरोसे को बनाए रखा।

1970 के दशक में युनाइटेड स्टेट एजेंसी फार इंटरनेशलन डेवलपमेंट (USAID) के बारे में लिखते हुए रॉबिन्स (1987 : 273) बताते हैं कि ""पहले विकास के जिन आंकलनों ने सकल राष्ट्रीय उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति आय के आधार पर उन्नति के

उपायों को जिस प्रकार से दर्शाया, वह भ्रामक थे। चूंकि एक गरीब के साथ क्या घटित हो रहा है, उसे उन्होंने छुपाया, एआईडी ने वंचित रह रही आबादी, अल्प–विकसित समाजों के सबसे कमज़ोर तबके को सहायता पहुँचाने के अपने उद्देश्य के प्रयोजन की घोषणा करने का एक बड़ा साहसिक कदम उठाया"। असमानता के केंद्रीय सामाजिक पहलुओं का यह परिवर्तन, गरीबों पर केन्द्रित विकास परियोजनाओं के आने का कारण बना, जहां कार्यक्रम का केंद्र "ग्रामीण समाज के आधुनिकीकरण एवं मुद्रीकरण तथा इसके परंपरागत अलगाव से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ने के बदलाव से सम्बद्ध था" (विश्व बैंक, 1974)। "गरीबी–उन्मुख" कार्यक्रम, विशेषतः ग्रामीण, शहरी गरीब, स्वास्थ्य, पोषण, एवं परिवार नियोजन क्षेत्रों में, इस प्रकार यह एक क्रम बन जाता है।

भागीदारी आधारित विमर्शों को लोकप्रिय बनाने के लिए मानव विज्ञानियों को विकास प्रयासों के कार्यों में भी शामिल किया जाता था, जो व्यापकता के साथ मानवशास्त्रीय कार्यप्रणाली पर ही आधारित था। इस प्रकार,, यह प्रस्तावित किया गया कि विकास आधारित परियोजनाएं सामाजिक आधार पर प्रासंगिक, सांस्कृतिक आधार पर उपयुक्त, तथा अर्थपूर्ण शैली में अपने द्वारा पोषित होने वाले प्रत्यक्ष लाभार्थियों को अपने दायरे में सम्मिलित करने वाली होनी चाहिए। "विकास" को किसी समाज की क्षमताओं में अपने उद्देश्यों के व्यवस्थापन हेतु तथा अपने कार्यक्रमों को सुचारु ढंग से चलाने के लिए वृद्धि के प्रतिनिधि के रूप में देखा जाता था। (बेलशाव, 1974)। इसके आगे, 1970 के दशक के उत्तरार्ध में, यूएसएआईडी द्वारा जारी किए गए 'नए निर्देश' आज्ञापत्र, के अनुसार व्यवहार्यता का एक मूल्यांकन, अनुकूलता, तथा जिस सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश में जिसमे यह विश्लेषण किया जाने वाला हो, उसमें किसी परियोजना के कारण पड़ने वाले संभावित प्रभाव का "सामाजिक आरोग्य विश्लेषण"(सोशल साउंडनेस एनालैसिस(SSA))करवाना शुरू किया गया। "सामाजिक आरोग्य विश्लेषण स्थानीय मूल्यों, आस्थाओं, तथा सामाजिक संरचना से लेकर विचार किए जा रहे तकनीकी पुलिंदे तक की प्रासंगिकता का हवाला देता है; वर्तमान सामाजिक साँचों में नयी खोजों को सटीकता से बैठाकर सांस्कृतिक एकीकरण को बढ़ावा देता है; ग्रामीणों तथा अन्य लोगों के उन विचारों को उजागर करवाता है जो वह अपनी परिस्थितियों के बारे में राय रखते हैं; तथा लोगों पर पड़ने वाले कार्यक्रमों के प्रभाव का एवं उनकी जीवन शैली का मूल्यांकन करता है" (रॉबिन्स 1986:19)। सामाजिक आरोग्य विश्लेषण तथा "ज्ञान, आचरण एवं व्यवहार" के अध्ययन ने मानव विज्ञानियों के लिए यूएसएआईडी की ओर द्वार खोले। हालांकि, मानवविज्ञानियों की संलिप्तता जारी रही, रॉबिन्स ने 1987 के अपने एक लेख में यह स्वीकार किया हैं कि "एआईडी कार्यक्रम में सामाजिक आरोग्य संघटक को जमीनी स्तर पर विकासकार्य को बढ़ावा देने के लिए सम्मिलित करना एक महत्त्वपूर्ण एवं अनिवार्य कदम था। मगर अभी तक कार्यक्रमों को अपने आप दिशा–निर्देशित करने की हमारी कथित आवश्यकताओं ने हमें मेजबान देश के कर्मियों को परियोजना प्रबंधन की बागडोर देने के प्रति अनिच्छुक बनाए रखा था। तकनीकी उत्तरदायित्त्व वाली हमारी प्रणालीयां हमें और अधिक काम करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं तथा उन लक्ष्यों की प्राप्ति जो हमारे समक्ष स्थापित किए जाते हैं, उनके लिए किये जाने वाले हमारे परिश्रम के बारे कम सिखाती है। इसके परिणामस्वरूप हम किसी ऐसे कार्यक्रम का अनुसरण नहीं कर रहे हैं जो एकदम सही हो; हम स्वयं पर उन देशों की निर्भरता को कम नहीं कर रहे हैं जिनकी हम सहायता कर रहे हैं"(1987:277)।

विकास आधारित विचारधारा में रूढ़िवादिता के आ जाने से मानवविज्ञानियों एवं विकासकों के बीच घनिष्ठता का पतन 1980 के दशक में होना प्रारम्भ हुआ, जिस समय अमेरिका के राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन थे। यह "बढ़ते असंतोष" का दौर था (1980–85), जिसने आगे चलकर 1980 के उत्तार्ध में "विकल्पों की खोज" (1985–90) को जन्म दिया, जिसने मानवविज्ञानियों और विकासवादियों दोनों के बीच एक अधिक वास्तविक एवं व्यावहारिक मनोदशा को चित्रित किया। पूंजी हस्तांतरण पर केन्द्रित परियोजना–आधारित दृष्टिकोण के कारण वैश्विक संरचनात्मक नीति में बदलाव आया।

"वैश्विक गरीबी, शोषण तथा असमानता के कारण बढ़ती निराशा ने कुछ अध्येताओं एवं कार्यकर्ताओं को 1990 के दशक में 'उत्तर–विकास' सोच के युग की शुरुआत करने का अवसर दिया, जिसने विकास की मान्यताओं एवं लक्ष्यों के बारे में मौलिक पुनर्विचार का समर्थन किया, इस आलोचना को एक पाश्चात्य सांस्कृतिक मानसिकता के रूप में चित्रित किया गया, जिसने भौतिकवादी मूल्यों को समरूप बनाया, तर्कसंगत–वैज्ञानिक शक्ति को आदर्श बनाया और पर्यावरणीय विनाश के अभूतपूर्व स्तर बनाए" (लूइस, 2005:4)। यह कुछ विद्वानों के लिए एक सम्पूर्ण विरोधी विचार का समर्थन करने तथा विकासकार्यों की घातकता में प्रतिरोध का कारण बना। पूरी चर्चा "विकासकार्यों के विकल्प" की ओर उन्मुख हो गयी और बाद में "विकास के विकल्प", मानव अधिकार एवं स्थायी विकास की ओर हो गए। 1990 के दशक के बाद विकास–नीति आधारित दृष्टिकोणों में विस्तार आया, तथा इस विस्तार से जुड़े कीवर्ड में विकास के कार्यान्वयन के प्रति महसूस किए गए कुछ असंतोष से निपटने के लिए क्षेत्रीय दृष्टिकोण, बजटीय सहायता, संरचनात्मक नीति, सुशासन तथा नवीन सार्वजनिक प्रबंधन को शामिल किया गया था।

21वीं सदी के प्रारम्भ को एक 15 वर्षीय सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (2000–2015), इत्यादि के रूप में चिन्हित किया गया। स.वि.ल. व्यापक दृष्टि से ओईसीडी देशों (आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन) एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रदाता संस्थाओं द्वारा निर्धारित किए गए थे, तथा सहायता प्रवाह द्वारा संचालित थे। लूइस (2005:2) लिखते हैं कि " 'विकास उद्योग' सार्वजनिक एवं निजी संस्थाओं एक शक्तिशाली एवं जटिल समूह है जो बड़ी भरी मात्र में अंतर्राष्ट्रीय विकास के लिए सहायता प्रदान कर रही हैं, जिनमें संयुक्त राष्ट्र की अंतर–सरकारी संगठन, विश्व बैंक अथवा अंतर्राष्ट्रीय विकास के लिए संयुक्त राज्य अमेरिकी एजेंसी (यूएसऐड) जैसे बहुआयामी एवं द्विआयामी प्रदाता, और बड़ी संख्या में गैर–सरकारी संगठन, छोटे विशेषज्ञ, जमीनी स्तर से संबंद्ध से लेकर बड़े अंतर्राष्ट्रीय संगठन जैसे ऑक्सफ़ेम अथवा बांग्लादेश ग्रामीण विकास समिति (BRAC) तक शामिल थे"।

सहस्राब्दि विकास के आठ लक्ष्य थे:

1. नितांत गरीब एवं भूख को मिटाना;
2. सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा को प्राप्त करना;
3. लिंग आधारित समानता एवं नारी सशक्तिकरण को बढ़ावा देना;
4. शिशु मृत्यु दर को घटाना;
5. मातृत्त्व स्वास्थ्य में संवर्धन करना;
6. एचआईवी/एड्स, मलेरिया, तथा अन्य बीमारियों से लड़ना;
7. पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करना;

8. विकास के लिए एक वैश्विक सहभागिता विकसित करना।

अन्य बातों के साथ, सहभागिता की पहचान के कारण, विकास आधारित कार्यक्रमों में सामाजिक स्तर पर भागीदारी एवं संलिप्तता के कारण गैर–सरकारी संगठनों के महत्त्व का आभास हुआ। यह विकास प्रक्रिया में नागरिक समाजों के साहचर्य के कारण मानव विज्ञानियों की संलिप्तता का कारण बना। विकास नीतियों की इस पुनर्संरचना के कारण विकास आधारित कार्यक्रमों को जमीनी स्तर तक अधिक संभावनाओं के साथ ले जाना संभव हो सका। नीतिगत ढांचे की प्रकृति अभी भी ऊपर से नीचे की ओर ही थी तथा आर्थिक शक्ति आधारित राजनीति की चुनौतियाँ ज्यों की त्यों बनी रही, हालांकि नीचे से ऊपर की ओर संचार के मार्ग खुले जिनके कारण एनजीओ अपने आपको तथा अपने समुदायों की चुनौतियों को, सामान्य एवं अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर प्रस्तुत कर पाने में समर्थ हुए। यह विकास आधारित संभाषणों में प्रतिनिधित्व एवं मतों को अधिकाधिक रूप से आगे लेकर आया जो कि स्थायी विकास लक्ष्यों (सविल) के साथ 2030 तक प्राप्त की जाने वाली वैश्विक विकास योजना के सूत्रीकरण की कुंजी थी।

4.3 स्थायी /सतत विकास के लक्ष्य (एसडीजीएस)

सतत विकास लक्ष्य (एसडीजीएस) (सस्टेनेबल डेवलपमेंट) की संज्ञा उत्पत्ति 1970 के दशक में हुई तथा इसे 1987 में संयुक्त राष्ट्र के ब्रंटलैंड आयोग द्वारा परिभाषित रूप से संगठित किया गया था। इस कमीशन ने स्थायी विकास की सबसे व्यापक रूप से स्वीकृत परिभाषा तैयार कीः "स्थायी विकास एक परिवर्तन प्रक्रिया है जिसमें संसाधनों का शोषण, निवेश की दिशा, तकनीकी विकास की उन्मुखता एवं सांस्थानिक परिवर्तन का सामंजस्य बैठाया जाता है तथा वर्तमान एवं भविष्य की क्षमताओं को प्रबल किया जाता है, ताकि आवश्यकताओं एवं भविष्य की महत्त्वाकांक्षाओं पर ध्यान दिया जा सके(. ...) यह वह है जिसके माध्यम से वर्तमान की आवश्यकताओं को आनेवाली पीढ़ियाँ अपनी जरूरतों को पूरी करने की संभावना के साथ बिना किसी समझौते के ध्यान दे सकती हैं"। पर्यावरण से संबन्धित सवालों एवं सामाजिक पर्यावरणिक संघर्ष आधारित उत्तेजना में वैश्विक राजनैतिक रूचि के बढ़ने के कारण, इस मुद्दे पर पिछले कुछ दशकों में विचार–विमर्श करने के लिए अभिप्रेरणा को बढ़ावा मिल रहा है। जैसा कि सच्स(2004) तर्क देते हैं, ऐसा इसी संदर्भ में है कि स्थायी विकास का प्रस्ताव सामाजिक समावेश, आर्थिक भलाई तथा प्रकृतिक संसाधनों के संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए एक वांछित एवं संभव विकल्प के रूप में प्रकट होता है (सोरेस एवं कुईटेल्ला, 2008)। अतः, एक संकल्पना जो पहले से विकास के विमर्श का भाग थी, उस पर स्थायी विकास के लक्ष्यों में पुनः बल दिया गया।

सितंबर 25–27 को, संयुक्त राष्ट्र आम सभा में 70वें अधिवेशन के दौरान संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों ने 2015 के बाद के विकास आधारित मुद्दों को शामिल करने के लिए एक विशेष शिखर सम्मेलन बुलाया। यह विशेष शिखर सम्मेलन "ट्रांसफॉर्मिंग अवर वर्ल्ड– द 2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट" की घोषणा को अपनाने के साथ संपन्न हुआ, जो लोगों, ग्रह, समृद्धि, शांति और साझेदारी की बेहतरी के लिए एक सार्वभौमिक आह्वान है, जो दायरे और महत्वाकांक्षा दोनों में अभूतपूर्व है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सहकारी, परिवर्तनकारी कार्रवाई को उत्प्रेरित करने के लिए, 2030 के एजेंडे में सतत विकास के लिए उपयोगी 17 सार्वभौमिक एकीकृत उद्देश्यों का एक सेट शामिल है, जिसके साथ कुल 169 ठोस लक्ष्य और संकेतक(चिन्हक) हैं। इन उद्देश्यों

को आधिकारिक तौर पर सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) के रूप में जाना जाता है। सतत विकास लक्ष्यों ने बहुत ही अर्थपूर्ण ढंग से सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों के पैमाने एवं विचारधारा पर विस्तार किया है। सतत विकास लक्ष्य स्थिरता के साथ एक वैश्विक विकास पर केन्द्रित हैं, तथा एक ऐसी समझ का प्रदर्शन करते हैं कि पर्यावरण स्थायी विकास के लिए कोई अतिरिक्त भार अथवा इसके विरोध में नहीं है, बल्कि एक ऐसा आधार है जो अन्य सभी लक्ष्यों को मजबूत बनाता है। नीचे 17 सतत विकास लक्ष्यों का एक संक्षिप्त विवरण दिया गया है:

आइये यह पता लगाने का प्रयास करते हैं कि सतत विकास लक्ष्य सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों की तुलना में अधिक समवेशी क्यों हैं:

1. **वैश्विक रूप से सहयोगी**–स्थायी विकास लक्ष्य की कल्पना एक सहभागिता आधारित प्रक्रियाओं के माध्यम से निर्मित हुई। 2013 में स्थायी विकास लक्ष्य का प्रारूप तैयार करने के लिए 30 सीटें साझा करने वाले 70 देशों से बने एक संयुक्त राष्ट्र ओपन वर्किंग ग्रुप (ओडब्ल्यूजी) को स्थापित किया गया था। इसे अपनी बातचीत प्रक्रिया में हितधारकों की एक पूरी श्रृंखला को सम्मिलित करने का काम दिया गया। इसके परिणामस्वरूप, विकासशील देश, स्थानीय एवं उप–राष्ट्रीय सरकारें तथा नागरिक समाज एवं निजी क्षेत्र के प्रमुख सक्रिय लोग इसके विषय के लिए महत्त्वपूर्ण उत्पादक सामाग्री दे पाने में समर्थ रहे।

2. **सार्वभौमिकता** – सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों के ठीक विपरीत स्थायी विकास लक्ष्य "विकासशील" बनाम "विकसित" के विरोधाभास को समाप्त करते हुए, विश्व के सभी देशों पर एक समान रूप से लागू होते हैं, जिसके कारण सहस्राब्दी विकास लक्ष्य को आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। ध्यान में रखे गए मुद्दे धनाड्य और गरीब, दोनों देशों पर समान रूप से लागू होते हैं। अतः, स्थायी विकास लक्ष्य सभी सं. रा. सदस्य देशों पर सार्वभौमिक रूप से लागू होंगे।

3. **वित्त–पोषण** – सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों का अनुरूपण व्यापक दृष्टि से सहायता प्रवाह द्वारा वित्त–पोषित होने के लिए किया गया था। स्थायी विकास लक्ष्य ने स्थायी, समावेशी आर्थिक विकास को रणनीति के केंद्र में बिन्दु रखा, तथा देशों

को अपनी सामाजिक चुनौतियों से अपनी ही राजस्व उत्पादक क्षमताओं की सहायता से निपटने के सामर्थ्य को संबोधित किया।

4. **विकेन्द्रीकरण**– विकेंद्रिकृत सहयोग तथा सीधी समन्वित कार्रवाई, जिसने स्थानीय सरकारी सक्रिय लोग, नागरिक संस्थाओं एवं निजी संगठनों की क्षमताओं को समर्थन दिया एवं उसको मजबूती प्रदान की। स्थानीय सरकारें एवं सक्रिय लोग ध्यान देने योग्य मुद्दों पर केन्द्रित हो सकते हैं, हालांकि, यहाँ पर एक सीधा समन्वयन है चूंकि सभी मुद्दे आपस में जुड़े हुए हैं और उनमें एक आधारभूत निरंतरता होने के साथ-साथ वह सीधे वैश्विक मुद्दों से मेल खाते हैं।

5. **डेटा क्रांति** – सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों ने निगरानी, मूल्यांकन और उत्तरदायितत्व के बारे में कोई बात नहीं की –स्थायी विकास लक्ष्य का 2020 का लक्ष्य "उच्च–कोटि के, यथासमय एवं भरोसेमंद आंकड़ों को आय, लिंग, आयु, जाति, वंश, प्रवास स्थिति, विकलांगता, भौगौलिक स्थिति तथा राष्ट्रीय संदर्भों में प्रासंगिक अन्य चरित्रों को वर्गीकृत ढंग से उपलब्ध करवाने को अर्थपूर्ण ढंग से बढ़ावा देना था"[४]।

6. **विषय क्षेत्र का विस्तार** – "मुख्य क्षेत्र" जो गरीबी के लक्षणों की सीमा से आगे होते हैं, से लेकर शांति, स्थिरता, मानव अधिकार एवं अच्छा शासन, स्त्री सशक्तिकरण इत्यादि के मुद्दों तक सभी शामिल थे।

7. **गुणवत्ता आधारित मुद्दों का पुनर्मूल्यांकन** – सहस्राब्दी विकास लक्ष्य में भूख एवं गरीबी के मुद्दे एक साथ दिखाई पड़ रहे थे अर्थात एक का समाधान करने पर दूसरे का समाधान दिखाई देता था। उस समय से लेकर पोषण के बारे में बहुत कुछ पता लगा लिया गया है, तथा सहस्राब्दी विकास लक्ष्य भोजन एवं पोषण सुरक्षा से हटकर अलग से गरीबी के मुद्दे को संबोधित करते हैं। इसी प्रकार, शिक्षा की गुणवत्ता सहस्राब्दी विकास लक्ष्य शिक्षा की मात्रा (जैसे कि उच्च नामांकन दरें) पर केन्द्रित थी। स.वि.ल. शिक्षा की गुणवत्ता / सीखने की– तथा एक बेहतर मानवोचित विश्व को बनाने में शिक्षा की भूमिका की बात करते हैं: स्थायी विकास एवं स्थायी जीवनशैलियों की, मानव अधिकारों, लैंगिक समानता, शांति एवं अहिंसा की एक संस्कृति को बढ़ावा देने, वैश्विक नागरिकता, तथा सांस्कृतिक विविधता को बढ़ावा देने की एवं स्थायी विकास में संस्कृति की भागीदारी युक्त शिक्षा।

संयुक्त राष्ट्र को आशा है कि यह लक्ष्य नियमों एवं आदर्शों के एक ढांचे का रूप धारण करेंगे जो विश्वभर में चल रही विकास परियोजनाओं एवं कार्रवाइयों पर प्रभाव डाल सकते है। जबकि 'संस्कृति' सतत विकास लक्ष्य संभाषणों का एक अभिन्न अंग बन चुकी है, फिर भी 'संस्कृति' को एक मुट्ठीभर संकेतकों के रूप में परिवर्तित कर पाना कठिन होता है, जो कि लक्ष्यों के परिमापन की एक मूल्यांकन विधि बनी हुई है। इसके अतिरिक्त, विश्व को एक स्थायी संस्कृति की ओर ढ़लने की आवश्यकता है। यह दोनों पहलू मानवविज्ञान की संलिप्तता के लिए अति–महत्त्वपूर्ण विषय हैं। विकास विमर्श के दिशा निर्धारण में, आलोचना, भेदभाव एवं सामाजिक समावेश, मानव अधिकार, सामाजिक संभाषण एवं तालमेल, नीति एवं कार्यक्रम संयोजन (समस्त नीति श्रृंखला के माध्यम से), कार्यक्रम क्रियान्वयन, जांच मूल्यांकन एवं प्रतिक्रिया चक्रों की

[४]https://advocacy.thp.org/2014/08/mdgs-to-sdgs/. Viewed on 28.6.2020. 11.39 pm

संरचना तथा और भी अन्य क्षेत्रों में मानव विज्ञानियों की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका सुनिश्चित होती है। एक समग्र परिप्रेक्ष्य के साथ एक समग्र अनुशासन होने के कारण मानवविज्ञान में एक बहु–विषयक क्रॉस–सेक्शनल दृष्टिकोण के रूप में योगदान करने की क्षमता है, यह देखते हुए कि कैसे विभिन्न विकास लक्ष्य एक दूसरे के पूरक बन सकते हैं और इनका समर्थन कर सकते हैं। मानवविज्ञान के विमर्शों में 'व्यवस्थापक' (एमिक) दृष्टिकोण पद्धति आधारित तकनीकी ज्ञान होता है। जिसकी सहायता से यह विकास के मार्ग पर अपनी यात्रा को निर्धारित करने में सहायक लोगों की भागीदारी एवं मतों को संगठित करने में योगदान दे सकता है।

अपनी प्रगति जांचें

4) ऐसे कुछ कारणों पर प्रकाश डालें जिनके कारण 1970 के दशक में मानव विज्ञानियों की सक्रिय संलिप्तता विकास प्रक्रिया में हुई?

.....

.....

.....

.....

.....

5) सतत विकास लक्ष्य एवं सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों के बीच कम से कम दो मुख्य अंतर स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

6) विकास के क्षेत्र में मानव विज्ञानियों को किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा?

.....

.....

.....

.....

.....

4.4 सारांश

हमने इस अध्याय का प्रारम्भ इस अनुभूति के साथ किया कि मानवविज्ञानी विकास प्रक्रिया के नीतिगत एवं कार्यक्रम आधारित चक्रों के विभिन्न चरणों में विभिन्न स्थितियों में रहते हुए जो कि अत्यावश्यक दर्शक से लेकर सक्रिय संलिप्तता, कार्यकर्ता की भूमिका तक में संलिप्त हैं। प्रयौगिक मानव विज्ञानियों ने कई प्रकार की भूमिकाएँ निभाई हैं, जिसमे समुदायों एवं बाहरी लोगों के बीच मध्यस्थता करना, पत्रकारिता एवं वकालत कार्य के माध्यम से जनाधार को प्रभावित करना, किसी संकट के समय में

सीधी सहायता प्रदान करना, या फिर विकास आधारित संगठनों के लिए एक सलाहकार बनकर काम करना शामिल हैं (लूइस, 2005)। यह पद स्थायी नहीं हैं तथा बहुधा मानवविज्ञानी द्वारा अपने आप से किए गए नैतिक संवाद के कारण बदलता रहता है। विकास प्रक्रिया की अनेक दुविधाओं में से एक, जो अब भी बनी हुई है वह है "अन्य" के रूप में पहचान, जो कि 'आत्म' में एकीकृत की जा सकती है।

मानवविज्ञानी, सूक्ष्म क्षेत्रीय अध्ययन एवं स्थूल व्याख्याओं के बीच आगे पीछे की होने की प्रक्रिया में अपने आपको असहज पाते हैं, जो कि बढ़ते क्रम में एक आवश्यक प्रक्रिया है। अन्य किसी सामाजिक वैज्ञानिक से बढ़कर एक ओर वह सामान्य सिद्धान्त एवं व्यापक व्याख्याओं के बीच अंतर के प्रति सचेत होते हैं, वहीं दूसरी ओर अनुभवजन्य, जमीनी स्तर व्याख्याओं के प्रति अपने अध्ययन में, तथा अपने स्वयं के कारण, विकास प्रक्रिया में संलिप्त मानवविज्ञानी स्थानीय वास्तविकताओं पर ऐसे सामाजिक एवं राजनैतिक विश्लेषणों को मढ़ देते हैं, जो प्रसिद्ध इलाकों में किए जा चुके हैं(बेल्शव, 1974)। इस प्रकार के विश्लेषणों का जन्म मानवविज्ञान एवं विकास दोनों में ही सैद्धांतिक परम्पराओं में देखने को मिलता है, जो संग्रहित विद्वत्ता एवं राजनैतिक अभियान का उत्पाद हैं, मात्र निष्पक्ष रूपरेखा नहीं हैं जिनके माध्यम से "स्थानीय ज्ञान" अबोध रूप से अपना प्रदर्शन करता है (एस्कोबर, 1991)।

विकास की संकल्पना ऊपर से नीचे की ओर एकाधिकार रखने वाले विकसित देशों से लेकर अधिक समावेशी अवधारणा की ओर एक लंबी यात्रा करके पहुंची है। हालांकि, विकास आधारित विमर्श पर उन अर्थशास्त्रियों तथा/अथवा राजनैतिक वैज्ञानिकों अथवा भूगोलशास्त्रियों का वर्चस्व रहा है, जो समान्यतः एक रोचक संभाषण सहभागी के रूप में मानवविज्ञान को नहीं समझते हैं। विकास आधारित मानव विज्ञानियों को बहुधा अपने आप को "वर्तमान एवं प्रत्याशित व्यवसायियों को सरकार एवं अपने उद्योग के लिए अपने मानवविज्ञानी ज्ञान की उपयोगिता एवं बिक्री–योग्यता का विश्वास दिलाने के लिए" जानबूझकर अथवा अनिच्छित रूप से अपने भूतपूर्व अनुभवों पर आधारित लेखों को संयोजित करके प्रस्तुत करना पड़ता था एवं 'बाज़ार' में अपनी मांग स्थापित करनी पड़ती थी (एस्कोबर, 1991)। हालांकि, विकास प्रक्रिया में मानवविज्ञान के योगदान को कभी भी अनदेखा अथवा नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता, तथा जैसे-जैसे मानव विज्ञानियों ने विकास आधारित विमर्शों में अपनी बातचीत जारी रखी, उनकी संलिप्तता की नयी संभावनाएं बनती चली गयी।

4.5 संदर्भ

Belshaw, C. S. (1974). "The Contribution of Anthropology to Development". *Current Anthropology.*15(4):520-5.

Evans-Pritchard, E. E. (1946). "Applied Anthropology".*Africa.* 16(1):92-98.

Escobar.A. (1991)."The Making and Marketing of Development Anthropology". *American Ethnologist*. 18(4): 658-682.

Foucault, M. (1994)."Dits et ecrits IV".referenced in Bierschenk. 2014. "From the Anthropology of Development to the Anthropology of Global Social Engineering". *Zeitschrift für Ethnologie, Special Issue: Current Debates in Anthropology*: 73-97.

Gezen, L and C. Kottak.(2014). *Culture*. New York: McGraw-Hill.

Grillo, R. (2002). "Anthropologists and development".in V. Desai and R. B. Potter (eds). *The companion to development studies.*London: Edward Arnold.

Lewis, D. (2005). "Anthropology and development : the uneasy relationship" [online]. *London: LSE Research Online*. Available at: http://eprints.lse.ac.uk/archive/00000253

Mair, L. (1965)."Tradition and Modernity in the New Africa".*Transactions of the New York Academy of Sciences*, 27 (4) ii: 439-444. https://doi.org/10.1111/j.2164-0947.1965.tb02980.x

Mead, M .(1955). *Cultural Patterns and Technical Change*. New York: Mentor

Mead, M. (1964).*Anthropology, A Human Science: Selected Papers 1937-1960*. Princeton: Van Nostrand.

Malinowski, B. (1976). The Dynamics of Culture Change: An Inquiry into Race Relations in Africa. Westport, Connectic: Greenwood Press Inc.

Partridge, *W.L.(ed)*. (*1984)*. *Training Manual* in *Development Anthropology*, Publication No. 17. *Washington D.C.*: *American Anthropological Association* and *Society* for *Applied Anthropology*.

Robins, E. (1986). "The Strategy of Development and the Role of the Anthropologist".in Edward C. Green (ed.) *Practicing Development Anthropology*. Boulder, CO: Westview Press.

Robins, E. (1987). "Who Knows Best? Where USAID Stands on Social Soundness".*Human Organization*. 46 (3): 273-277.

Sachs, I. (2004). "Desenvolvimento: includente, sustentável, sustentado". referred in Soares. J. Jr. and Quintella R. H.2008. "Development: an Analysis of Concepts Measurement and Indicators". *BAR, Curitiba*. 5(2)ii: 104-124.

Soares. J. Jr. and Quintella R. H.(2008). "Development: an Analysis of Concepts Measurement and Indicators". *BAR, Curitiba*. 5(2)ii: 104-124.

United Nations, Department of Social and Economic Affairs.(1951). *Measures for the Economic Development of Underdeveloped Countries*. New York: United Nations.

United Nations Research Institute for SocialDevelopment.(1972). Contents and Measurements. New York : Praeger Publishers.

World Bank.(1974). *Rural Development Policy paper*. Washington: World Bank.

4.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

1. अनुछेद 3 अनुभाग 4.0 को देखें।
2. **परिचय** एवं अनुभाग 4.1 को देखें।
3. भाग 4.1 को देखें।
4. भाग 4.2 के अनुछेद 3, 4, और 5 को देखें।
5. भाग 4.3 के अनुछेद 13, 14, 15, 16, 17, 18 एवं 19 को देखें।
6. विकास आधारित विमर्श पर उन अर्थशास्त्रियों तथा/अथवा राजनैतिक वैज्ञानिकों अथवा भूगोलशास्त्रियों का वर्चस्व रहा है, जो समान्यतः एक रोचक संभाषण सहभागी के रूप में मानवविज्ञान को नहीं समझते हैं। विकास आधारित मानव विज्ञानियों को बहुधा अपने आप को "वर्तमान एवं प्रत्याशित व्यवसायियों को सरकार एवं अपने उद्योग के लिए अपने मानवविज्ञानी ज्ञान की उपयोगिता एवं बिक्री–योग्यता का विश्वास दिलाने के लिए" जानबूझकर अथवा अनिच्छित रूप से अपने भूतपूर्व अनुभवों पर आधारित लेखों को संयोजित करके प्रस्तुत करना पड़ता था एवं 'बाज़ार' में अपनी मांग स्थापित करनी पड़ती थी (एस्कोबर, 1991)।

इकाई 5 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान एवं बाज़ार*

इकाई की रूपरेखा

5.0 परिचय

5.1 बाजार के साथ मानवशास्त्रीय जुड़ाव

5.2 बाजारों को समझने में मानवविज्ञान का पद्धतिगत योगदान

5.3 बाज़ार के मानवविज्ञान में नैतिक विमर्श

5.4 सारांश

5.5 संदर्भ

5.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

अधिगम के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी सक्षम होंगेः

- विभिन्न प्रकार के बाज़ारों एवं उनकी भिन्न–भिन्न सूक्ष्मताओं को परिभाषित करने में;
- उस शैली की व्याख्या करने में, जिसमें मानवविज्ञानी बाज़ारों की अवधारणा को देखते हैं;
- इस बात की पहचान करने में कि अर्थशास्त्र के क्षेत्र में विकास करने के लिए मानवशास्त्रीय पद्धति का प्रभावी ढंग से उपयोग कैसे होता है; तथा
- अर्थशास्त्र की मुख्यधारा में मानवविज्ञान के नैतिक विमर्श की व्याख्या करने में।

5.0 परिचय

"बाज़ार आर्थिक प्रक्रियाओं एवं लेन–देन का संजाल होते हैं जो कि लेन–देन संबंधी ब्रह्मांड में बिना किसी विशेष अवस्थिति अथवा स्थानिक सीमाओं के हो सकते हैं। बाज़ार सामाजिक संस्थान भी होते हैं, जो बहुधा भौगौलीक आधार पर विभिन्न स्थानों पर अवस्थित होते हैं, जो अपने दायरे में ऐसी विशिष्ट सामाजिक, कानूनी एवं राजनैतिक प्रक्रियाओं को धारण किए होते हैं जो न केवल

आर्थिक लेन–देन को सक्षम बनाती हैं, बल्कि इनका विस्तार इनसे कहीं आगे तक हैं" (बेस्टर, 2001:9227)। एक बाज़ार बहुत–सी प्रणालियों, संस्थानों, क्रियाविधियों, सामाजिक सम्बन्धों एवं आधारिक संरचनाओं में से एक होता है, जिसके माध्यम से विभिन्न पक्ष परस्पर लेन–देन प्रक्रिया मैं संलिप्त होते हैं।

इस विचारधारा के साथ, आइये इस अध्याय का प्रारम्भ बाज़ारों के उन विभिन्न परिदृश्यों की कल्पना करते हुए करते हैं, जिनका हमें अनुभव हो चुका है अथवा देख चुके हैं और सुन चुके हैं।

* **योगदानकर्ता** : डॉ. इंद्राणी मुखर्जी पोस्ट–डॉक्टोरल फेलो, मानवविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

चित्र 1 आदिवासी बाज़ार

चित्र 2 सुपरमार्केट का एक भाग

चित्र 3 गली में एक सब्जी बेचने वाला

किसी सुपरमार्केट (चित्र 2) के बारे में सोचिए, जो ताज़ा खाने से लेकर, किराने का सामान, खिलौने, कपड़े, श्रृंगार–प्रसाधन, घरेलू उपयोग की वस्तुएँ, बिजली का सामान इत्यादि तक की एक सारणी प्रदान करता है। यह सभी वस्तुओं पर स्पष्ट रूप से उनका मूल्य उल्लिखित होता है (समान्यतः उस वस्तु के विवरण के साथ)। उस परिस्थिति में जहां किसी सामान पर कोई छूट अथवा उसके साथ कोई मुफ्त सामान का प्रावधान होता है, वह पूर्व–नियोजित होता है तथा उसका उल्लेख पहले से उपभोक्ताओं को स्पष्टता एवं चुनाव की व्यवस्था प्रदान करने के लिए किया जाता है। हालांकि, वहाँ पर आपको सहायता प्रदान करने के लिए पहले से उपस्थित परिचारक अथवा सहायक होते हैं, जो सुपरमार्केट में अलग अलग भागों में प्रदर्शित विभिन्न वस्तुओं के लिए आपका मार्गदर्शन करते हैं। उनका मुख्य काम समान्यतः वस्तुओं को ढूँढने में आपकी सहायता करना होता है तथा यह एक सम्पूर्ण रूप से औपचारिक संबंध होता है। जो वस्तुएँ आप खरीदते हैं। उनके प्रदर्शित मूल्यों के आधार पर उनकी कीमत चुकानी होती है तथा आप उनकी कीमतों का मोल–भाव नहीं कर सकते तथा बहुधा आप अपनी आवश्यकताओं से अधिक वस्तुएँ ही खरीद लेते हैं चूंकि वहाँ पर आपकी पसंद के बहुत सारे विकल्पों में से चुनने की आदत से आप लाचार हो चुके होते हैं। अब पड़ोस के ही किसी स्थानीय मॉम एंड पॉप स्टोर के बारे मे सोचिए। इस स्टोर में समान्यतः कुछ लोग पहले से कार्यरत होते हैं। आपको जो वस्तुएँ खरीदनी हैं, उन तक आपकी सीधी पहुँच हो, यह कोई आवश्यक नहीं है। आपको जो वस्तुएँ चाहियें उनको आप अपनी बनाई सूची अनुसार मांगते हैं तथा फिर वह वस्तुएँ आपके सामने प्रस्तुत कर दी जाती हैं। यदि आप किसी वस्तु की विशिष्ट ब्रांड को खोज रहे हैं, और यदि वह उपलब्ध नहीं है, तो आपके सामने उसका विकल्प प्रस्तुत किया जा सकता है। दुकानदार सामान्यतः यह वस्तु बेच पाने में समर्थ होता है, वह पारस्परिक जानकारी का उपयोग कर सकती/सकता है, उदाहरण के लिए, यदि आप एक नौजवान विद्यार्थी हैं और एक पेन खरीदने आये हैं, तो दुकानदार आपको यह बताएगा कि किस प्रकार वह विशिष्ट पेन आपकी उम्र के लोगों में लोकप्रिय है, अथवा किस प्रकार उस क्षेत्र के कुछ अधिक लोकप्रिय/पढ़ने लिखने वाले लोगों के द्वारा वह पेन पसंद किया जाता है, किस प्रकार वह वस्तु आपकी छवि में निखार ला सकती है (ब्रांड, रंग इत्यादि), किस प्रकार वह वस्तु आपकी किसी खास ज़रूरत को पूरा कर सकती है (रिसाव–रहित, बराबर लिखाई), दुकानदार शायद आपको उस पेन को एक बार उसकी पकड़ को, चिकनी लिखाई इत्यादी को आज़माने के लिए लिखकर उपयोग करने के लिए भी कहे। दुकानदार के साथ आपका संबंध अर्ध–अनौपचारिक होता है। दुकानदार तथा आप एक बातचीत में संलिप्त हो जाते हैं। यह बातचीत सामान खरीदने की प्रक्रिया से कहीं आगे भी जा सकती है, जिसमें मौसम, सामाजिक घटनाएँ एवं अन्याय, राजनीति, स्वास्थ्य, गली–मोहल्ले की बातें, व्यक्तिगत जानकारियाँ इत्यादि भी शामिल हो सकती हैं। दुकानदार समान्यतः इन जानकारियों को याद रखते हैं तथा जब आप अगली बार वहाँ जाएंगे तब भी उस बातचीत को जारी रख सकते हैं। आप उस दुकान पर नियमित रूप से जाना शुरू कर देते हैं, जहां आप बहुधा दुकानदार से सबंध के आधार पर बातचीत जारी रखते हैं, जैसे अंकल/आंटी अथवा भैया (बड़ा भाई)। चूंकि, दुकानदार अपने ग्राहकों के साथ समान्यतः एक मैत्रीपूर्ण संबंध बनाके रखता है, इसलिए बहुधा ऐसा करने से वैचारिक आदान–प्रदान का एक सौहार्दपूर्ण वातावरण तैयार होता जाता है जहां पर ग्राहक स्वयं एक दूसरे के साथ बातचीत में संलिप्त हो सकते हैं, जिसके कारण चर्चाओं में संलिप्त होने के लिए तथा तुलनात्मक रूप से जीवन को एक आरामदायक गति प्रदान करने वाला एक सामाजिक परिवेश

तैयार होता जाता है। आपको ऐसा आभास होता है जैसे दुकानदार आपका हितैषी है। दुकानदार आपके द्वारा नियमित रूप से खरीदे गए सामान को अधिकतर याद रखता है तथा बहुत बार आपके मांगने से पहले ही वह सामान आपके सामने प्रस्तुत कर देता है, आपको याद भी दिलाता है की कहीं आप कुछ भूल तो नहीं रहे हैं, अथवा आपसे प्रश्न भी करता है जब आप अपनी नियमित सूची से किसी वस्तु को बाहर कर देते हैं तो। आप ब्रांड वाली वस्तुओं को उन पर दर्शायी गयी कीमतों के आधार पर ही खरीदते हैं, जबकि जिन वस्तुओं को पहले से पैक नहीं किया गया है, उनके लिए मोल–भाव किया जा सकता है। यदि आपको कोई विशिष्ट वस्तु चाहिए होती है, तो आप दुकानदार को आपके लिए मँगवाने के लिए कह सकते हैं तथा संभवतः दुकानदार ऐसा करे भी। आप एक प्रकार से दुकान के संरक्षक बन जाते हैं तथा दुकानदार के साथ आपका संबंध इतना घनिष्ठ हो जाता है कि दुकानदार आपके द्वारा अपने प्रतिद्वंद्वी के यहाँ से सामान लाने पर अपमानित अनुभव कर सकता है अथवा इस बात को लेकर वह आपसे अपने दुख अथवा नाराजगी को भी अभिव्यक्त कर सकता है।

अब, एक साप्ताहिक किसान मंडी/सब्जी मंडी अथवा कपड़ों/साधारण वस्तुओं के बाज़ार की कल्पना कीजिये जैसे दिल्ली का पालिका बाज़ार अथवा सरोजिनी नगर मार्केट। बहुधा इन बाज़ारों में लोग एक बेहतर मोल–भाव करने की आशा से जाते हैं। मोल–भाव होना न केवल यहाँ नित्य प्रतिदिन की प्रक्रिया है बल्कि इसमें संलिप्त दोनों पक्ष (अर्थात क्रेता एवं विक्रेता) इस प्रक्रिया का आनंद भी लेते हैं। ऊंची आवाज़ें तथा वापस आने के लिए चले जाना अथवा दुकानदार द्वारा अपने ग्राहकों को खींचकर वापस ले आना, यहाँ साधारण घटनाएँ हैं। जबकि मोल–भाव की प्रक्रिया में अनौपचारिक मीठी बातों द्वारा एक दूसरे को मनाना शामिल हो सकता है, परंतु यह बातचीत केवल क्रय–विक्रय के उद्देश्य से की जाती है। एक किसान मंडी/सब्जी मंडी में एक व्यक्ति न केवल कम कीमतों के लिए मोल–भाव करता है बल्कि साथ में कुछ छोटी– मोटी वस्तुएँ निशुल्क लेने की कामना भी रखता है। सड़क की पटरी पर खड़े होकर सब्जी/फल बेचनेवाले के साथ भी इसी प्रकार की मोल–भाव आधारित बातचीत करते हुए लोगों को देखा जा सकता है। इसके ठीक विपरीत एक थोक बाज़ार को देखा जा सकता है जहां पर वस्तुओं की कीमतों में उनकी थोक में की गयी मांग के आधार पर तेज़ी से कम किया जा सकता है, हालांकि इस परिस्थिति में मोल–भाव की बातचीत अधिक औपचारिक अथवा पारस्परिक होती है। अब एक आदिवासी बाज़ार को देखते हैं, जो कि समान्यतः बहुत ही जीवंत तथा रंग–बिरंगा स्थान होता है, जिसमें एक ही मंच पर स्थानीय निर्मित अथवा कुछ पड़ोसी क्षेत्रों से और मुख्य धारा के बाज़ारों से लाई गयी वस्तुओं का समागम होता है। यहाँ बेचे जाने वाली वस्तुओं के लिए इस बाज़ार में स्थानीय मान्यता प्राप्त मानकों का उपयोग करते हैं। इन मानकों की प्रकृति औपचारिक हो भी सकती है और नहीं भी। यदि आप चित्र 1 को देखें, आप पाएंगे कि सब्जियों के छोटे छोटे ढेर लगाए गए हैं, जिसमे प्रत्येक ढेर विक्रेता द्वारा निर्धारित वांछित मूल्य में बेचा जाता है। कीमत मोल–भाव करने योग्य हो भी सकती है और नहीं भी, जो क्रेता द्वारा प्रस्तावित मूल्य तथा कभी कभी वस्तुओं के विनिमय पर आधारित होती है।

आज के भूमंडलीकृत विश्व के बाज़ारों में मानकीकृत उत्पाद उपलब्ध हैं। एक मेकडोनाल्ड आउटलेट की कल्पना कीजिये, जो कि अमेरिका, इंग्लैंड, थायलैंड तथा भारत में भी है। यह ब्रांड ऐसा है कि भिन्न–भिन्न भौगौलिक स्थानों पर भी इसे

सरलता के साथ पहचाना जा सकता है, जबकि खाने को स्थानीय रूचियों के आधार पर बहुधा अनुकूलित किया जाता है, तब भी इसकी एक विशिष्ट पहचान है।

बहुत से बाज़ार स्थायी हैं जबकि कुछ स्वाभाविक, कुछ बाज़ार सामयिक हैं, जो नियमित अथवा अनियमित अंतरालों पर आयोजित किए जाते हैं, इसके साथ साथ स्थानीय साइकिल फेरीवाले जो कुछ विशिष्ट स्थानों पर नियत कालचक्र में ही जाते हैं। सूचना प्रौद्योगिकी में हुए विस्तार, इसकी पहुँच एवं ई–वाणिज्य होने की क्षमता के कारण बाज़ारों की प्रकृति अब आभासीय हो गयी है। घर–घर दी जा सकने वाली सेवाओं के तथा द्रुतवाहक सेवाओं के माध्यम से हम अपने घर बैठे ही वस्तुएँ खरीद सकते हैं या बेच सकते हैं। इंटरनेट आधारित स्टोर तथा नीलामी वेबसाइट जैसे अमेज़ोन तथा ई–बे ऐसे बाज़ारों का उदाहरण हैं जहां सभी लेन–देन ऑनलाइन ही किया जा सकता है तथा इसमें संलिप्त दोनों पक्ष कभी भौतिक रूप से एक दूसरे से नहीं मिलते।

प्रत्येक बाज़ार स्वयं के नियमों के आधार पर अपने आपको नियमित करता है, यदि आप एक सुपरमार्केट में जाएंगे तथा किसी वस्तु के मूल्य को लेकर मोल–भाव करने की कोशिश करेंगे अथवा अपने द्वारा खरीदे जानी वाली वस्तुओं का विनिमय वस्तुओं के साथ करने का प्रयास करेंगे तो आपको सीधा बाहर जाने का दरवाजा दिखा दिया जाएगा। इसी प्रकार, यदि आप एक आदिवासी बाज़ार में वस्तुओं पर उनका वर्णन एवं उनके उपयोग किए जाने की अंतिम तिथि उल्लिखित होने की कामना करेंगे, तो आपको निराशा ही हाथ लगेगी। प्रत्येक बाज़ार की अपनी एक संरचना प्रतिपादन और संचालन के नियम के साथ–साथ इसका एक वांछित सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवहार होता है। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक बाज़ार स्थानीय एवं वैश्विक राजनीति से प्रभावित होता है। ये बाज़ार, इन सबके एवं एक दूसरे के प्रभाव के बावजूद फलते फूलते हैं; वे परस्पर सह–अस्तीत्त्व, मेलजोल, संजाल, एक दूसरे को प्रभावित करने के साथ– साथ प्रतिद्वंद्वता की भावना भी रखते हैं। वे समाज के अनौपचारिक क्षेत्रों से लेकर एवं उच्च स्तरीय ढंग से नियमित परिस्थियों तक, विस्तृत व्यापार से लेकर लघु व्यापार कंपनियों तक, कानूनी जगहों के साथ साथ गैर–कानूनी जगहों (काला बाजार) तक, ग्रामीण बाज़ार एवं शहरी बाज़ार, भौतिक वस्तुओं वाले भौतिक स्थानों तथा अस्पृश्य वित्तीय संपत्ति वाले आभासीय स्थानों के बीच, निरंतरता के साथ अस्तित्व में रहते हैं। "बहुत से छोटे बाज़ार, समुदायों में सामाजिक रूप से विद्यमान हैं, जहां पर निर्माता एवं उपभोक्ता एक दूसरे के सम्मुख आकार सब्जियों, चिकन, अथवा कपड़े के बटन के लिए सौदा करते हैं। जो नित्य प्रतिदिन के जीवन का हिस्सा हैं, चाहे वह किसान समुदाय हो, एक शहरी बाज़ार हो, अथवा एक मध्यवर्गीय उपनगर हो। स्थानीय बाज़ारों के साथ-साथ अधिक विशिष्टताप्राप्त बाज़ार, जैसे व्यावसायिक व्यापारियों के शहरी थोक बाज़ार, बहुधा जटिल, एक दूसरे में गुंथे हुए सम्बन्धों पर आधारित होते हैं, जो लिंग, वंश, वर्ग, तथा नातेदारी के साथ-साथ आर्थिक भूमिका के इर्द–गिर्द लिपटे होते हैं। अन्य अत्यंत भिन्न प्रकार के बाज़ार जैसे कि 'स्पॉट बाज़ार' जहां पर आर्थिक रूप से संलिप्त पात्र केवल एक बार के लेन–देन के समय ही परस्परता दिखते हैं, जैसे कि अचल संपत्ति बाज़ार, श्रमिक बाज़ार, तथा वैश्विक उपयोगवस्तु बाज़ार, (चीनी, कॉफी अथवा रबड़ जैसी वस्तुओं के लिए)। लंबी–दूरी के व्यापार की श्रेणी, विदेशी वस्तुएँ एवं वैश्विक उपयोग वस्तुएँ, दोनों ही अति–विशिष्ट बाज़ारव्यवस्था से होकर गुज़र सकते हैं, जिसमें एक स्थानीय अथवा किसी वैश्विक उद्योग का समन्वयन होता है" (बेस्टोर, 2001:9228)।

बाज़ार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यापार योग्य वस्तु जैसे माल, सेवाएँ, सूचना, इत्यादि का मूल्यांकन एवं मूल्य निर्धारण, व्यापार में संलिप्त संस्थाओं के बीच आपस में अधिकारों एवं स्वामित्व के हस्तांतरण को सुविधाजनक बनाने के लिए किया जाता हैं। विनिमय प्रक्रियाओं में पैसे का लेन–देन शामिल हो भी सकता है और नहीं भी। बाज़ार, उत्पादों (माल, सेवाएँ) अथवा बिकने वाले साधन (श्रम एवं पूंजी), उत्पाद में भिन्नता, वह स्थान जहां पर विनियम किए जाते हैं, लक्षित क्रेता, अवधि, विक्रय प्रक्रिया, भौगौलीक सीमाएं इत्यादि के आधार पर भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। बाज़ार बहुत से कारकों से प्रभावित होते हैं, जिनमें मांग एवं आपूर्ति, उत्पादन लागत, तकनीक एवं उत्पाद का स्रोत, न्यूनतम मजदूरी, मूल्य निर्धारण, बाज़ार में क्रेता एवं विक्रेताओं की संख्या तथा प्रतिस्पर्धात्मक मूल्य निर्धारण, सरकारी नियामक, कर, शुल्क एवं कर कटौती, लोगों की आय, अपेक्षाएँ, नियम एवं सीमा शुल्क, विनिमय में कानूनी दांव–पेंच, सट्टेबाज़ी की गहनता, आकार, घनत्त्व, विनिमय विषमता, विदेशी व्यापार के प्रति परिवर्तनशीलता एवं स्थानीय खुलापन, इत्यादि शामिल होते हैं। "औपचारिक अथवा अनौपचारिक नियामकों के ढांचे, जो किसी बाज़ार के सुगम संचालन में सहायक होते हैं, सामान्यतः बाज़ार में स्वयं उपस्थित प्रतिभागियों द्वारा निर्मित आत्म–विनियमन आधारित तंत्रों के साथ राजनैतिक अथवा विधिक प्राधिकरणों द्वारा लागू किए गए तंत्रों का मिश्रण होते हैं। व्यापार एवं बाज़ार की सामाजिक, संस्थागत संरचना, व्यापक विभिन्न मूल्य तंत्रों में प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित दिखाई देती है, जैसे वस्तु–विनिमय, बोली लगाना, सौदेबाजी, निर्धारित मूल्यों को व्यवस्थित करना, अथवा अनुबंधों में मोल–भाव के लिए बातचीत के साथ-साथ मूल्य में कमी, छूट, अथवा वापसी, जो कि विभिन्न बाज़ारों में विद्यमान हैं, जो क्रेता एवं विक्रेताओं के बीच बाज़ार शक्ति के भिन्न-भिन्न संतुलनों को प्रतिबिम्बित करती हैं एवं आकार प्रदान करती हैं" (बेस्टोर, 2001)। मानव विज्ञानी इन सामाजिक घटनाओं, बाज़ारों, संजालों एवं सबन्धों, ढांचों एवं संगठनों, सीमा शुल्क एवं नियमों इत्यादि को समझने के लिए विभिन्न क्रमपरिवर्तन और संयोजन में संलिप्त होते हैं, जिसे अध्याय के अगले भाग में स्पष्ट किया गया है।

5.1 बाजार के साथ मानवशास्त्रीय जुड़ाव

मानव विज्ञानियों की रूचि बाज़ार एवं बाज़ार लगाए जाने की जगह, दोनों में समान रूप से होती है। प्लेट्नर (1989) ने इस उपयोगी भेद पर प्रकाश डाला है, जहां वह इस बात का उल्लेख करते हैं कि "बाज़ार विनिमय का एक सामाजिक संस्थान है जहां कीमतें एवं विनिमय अनुरूप वस्तुएँ विद्यमान होती हैं। 'बाज़ार लगाए जाने की जगह' एक प्रथागत समय एवं स्थान पर विनिमय को संचालित करने वाली इन परस्पर बातचीत प्रक्रियाओं को संदर्भित करती है.... एक बाज़ार किसी बाज़ार लगाए जानेवाली जगह पर बिना स्थानबद्ध हुए अस्तीत्त्व में हो सकता है, परंतु किसी बाज़ार लगाए जानेवाली जगह की कल्पना बिना किसी संस्थान के नहीं की जा सकती" (पृ. 171)। अतः, "मार्केट प्लेस (बाज़ार लगने वाला स्थान), सामाजिक संस्थानों के एक स्थानियन समूह, सामाजिक लोग, संपत्ति अधिकारों, उत्पादों, लेन–देन सम्बन्धों, व्यापार क्रियाओं, तथा सांस्कृतिक साधनों से मिलकर बनता है, जिसका ढांचा व्यापक विविधताओं के कारकों से मिलकर बनता है, जो 'शुद्ध रूप से आर्थिक', 'शुद्ध रूप से राजनैतिक' अथवा 'बाज़ार' शक्तियों तक ही सीमित नहीं हैं" (बेस्टोर, 2001:9227)। जॉन एफ. शेरी, जू. (1989) इस बात की ओर इंगित करते हैं कि "बाज़ार लगने वाली जगह पर होने वाले विनिमय जिनका मानव विज्ञानियों द्वारा सर्वाधिक आदर्श रूप में

अध्ययन किया गया है, उनका चरित्र–चित्रण अनेक अन्योन्याश्रित प्रक्रियात्मक आयामों एवं संस्थागत शैलियों द्वारा किया जा सकता है। प्रक्रिया के स्तर पर, विश्लेषण अवस्थिति, बातचीत, एवं आवंटन आधारित रहे हैं। अवस्थिति आधारित विश्लेषण उत्पादन से लेकर विनिमय होने तक अथवा विक्रय से उपभोग होने तक के सामान के स्थानिक प्रवाह का ध्यान रखता है। बातचीत आधारित विश्लेषण, लेन–देन करनेवालों के सामाजिक सम्बन्धों की छानबीन, मोल–भाव करने की गतिकी, व्यापारिक साझेदारियाँ तथा आनुष्ठानिक उपहार लेन–देन जैसी विशेषताओं की ओर विशेष ध्यान देता है। आवंटन आधारित विश्लेषण, मात्रात्मक आर्थिक मूल्यों में लेन–देन के नतीजों की व्याख्या करता है" (पृ.556)। इसके अतिरिक्त, परिवर्तनगामी सामाजिक अध्ययन, मुखरता एवं सहलग्नता आधारित मुद्दों को समझने के लिए अत्यावश्यक हैं, चूंकि अनेकों प्रकार की एवं मानदंडो की अर्थव्यवस्थाएँ मिलकर एक वैश्विक प्रणाली अथवा प्रणालियों का निर्माण करती हैं (शोयाते एवं लिंगर 1988)। "बाज़ारों को नियमित रूप से एक मौलिक आर्थिक संस्थान के रूप में पहचाना जाता है और उनकी तुलना में लंबे समय तक विविध मानवविज्ञानी दृष्टिकोणों की अनदेखी की जा रही थी। मानव विज्ञानियों का ध्यान विशिष्ट बाज़ारों में व्यक्ति विशेष तथा छोटे–समूह आधारित विनिमय सम्बन्धों, उन सांस्थानिक ढांचों पर जो बाज़ारों को व्यवस्थित करते हैं, तथा उन सामाजिक, राजनैतिक एवं स्थानिक अनुक्रमों पर केन्द्रित होता है जिनके माध्यम से बाज़ार सामाजिक वर्गों, वांशिक वर्गों, अथवा क्षेत्रीय समाजों को बड़ी प्रणालियों में लाकर जोड़ते हैं। बाज़ारों का मानवशास्त्रीय अध्ययन, उनका विश्लेषण, जटिल सामाजिक प्रक्रियाओं एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के उत्पादकों के साथ साथ आर्थिक विनिमय के लिए क्षेत्रों की ग्रंथियों के रूप में करते हैं। इसलिए, बाज़ारों में मानव विज्ञानियों की रूचियाँ– अर्थशास्त्रियों की सोच के साथ– आंशिक रूप से अलग हैं – हालांकि कुछ निश्चित अतिव्यापी भी हैं" (बेस्टोर, 2001: 9227)। मूर्त सामान एवं अमूर्त बौद्धिक संपत्ति, दोनों ही के बाज़ार उस सीमा तक विस्तार कर चुके हैं, जहां आर्थिक लेन–देन ने दूर–दराज स्थित लोगों के बीच विनिमय के संबन्धों का निर्माण किया है, तथा वैश्विक पूंजीवाद के प्रभावों में, मुद्रा के अर्थों में अनुवर्ती रूपान्तरण का कारण बना है, जो कि मानव विज्ञानी अन्वेषण के लिए एक उपजाऊ जमीन का काम करता है (गुडेमन, 2001)।

बाज़ार के परिप्रेक्ष्य में विनिमय के संबन्धों का सर्वप्रथम अन्वेषण पोलिश–ब्रिटिश मानवविज्ञानी ब्रोनिसलो मलिनोस्की द्वारा ट्रोब्रियांड द्वीपसमूहों में किए गए अग्रणी कार्यों के माध्यम से किया गया था, जो की उनकी पुस्तक *अर्गोनौट्स ऑफ द वेस्टर्न पैसिफिक* (1922) में दर्ज हैं। ट्रोब्रियांड द्वीपसमूहों के वासी द्वीपसमूहों के बीच व्यापार करने के उद्देश्य से यात्राएं करते थे। इस प्रकार की मीलों लंबी यात्रा अप्रत्याशित महासागर के माध्यम से *डोंगी* में सवार होकर की जाती थी तथा बहुधा यह बेहद खतरनाक एवं जीवन के लिए भयंकर होती थी। इन द्वीपवासियों को चलते रहने में जो बात ईंधन का काम करती था वह था कुछ तुच्छ वस्तुओं अथवा नकली आभूषणों का एक साथ समारोहपूर्ण आदान–प्रदान, जिसे *कुला* कहते थे, जो इन व्यापारिक यात्राओं के दौरान किया जाता था। मलिनोस्की इस प्रश्न को सोचकर घबरा गए कि "आखिर क्यों यह लोग इतने विशाल खतरनाक महासागर में यात्रा करने के लिए अपनी जान दांव पर लगाते हैं, वह भी मात्र इन तुच्छ वस्तुओं अथवा नकली आभूषणों के लेन–देन के लिए, जो बेहद व्यर्थ प्रतीत होता है"? उन्होने बहुत ही ध्यानपूर्वक इन तुच्छ वस्तुओं (कंगन एवं हार) के विनिमय के संजाल का पता ट्रोब्रियंद द्वीपसमूहों में

जाकर लगाया। उन्हे पता चला कि सभी *कुला* मूल्यवान वस्तुएँ गैर–उपयोगी वस्तुएँ होती हैं जिनका व्यापार शुद्ध रूप से अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा एवं गौरव को बढ़ाने के उद्देश्य से किया जाता है। बड़े ही ध्यानपूर्वक ढंग से निर्धारित की गयी प्रथाएँ एवं परंपराएँ इन समारोहों के दौरान निभाई जाती, जिनके साथ साथ विनिमय का आयोजन भी होता। कुला विनिमय में भागीदारी का अधिकार स्वतः नहीं मिलता। प्रत्येक को विनिमय के विभिन्न निचले स्तरों पर भागीदारी करते हुए, दूसरों के तरीके को "मानना" पड़ता है। देनेवाले–लेनेवाले के बीच का संबंध सदैव विषम होता हैः इसमे पहले वाला प्रतिष्ठा के आधार पर बड़ा होता है। कुला मूल्यवान वस्तुओं को उनके मूल्य एवं उम्र के आधार पर श्रेणीबद्ध किया जाता है, उसी के आधार पर यह संबंध होते हैं जो विनिमय के दौरान निर्मित होते हैं। भागीदार ज़्यादातर विशेषतः मूल्यवान तथा प्रख्यात कुला वस्तुओं के लिए ही प्रतिस्पर्धा करेंगे, जिनके स्वामियों का यश बहुत ही तेज़ी के साथ द्वीपसमूहों में फैलेगा। यह प्रतिस्पर्धा भिन्न भिन्न लोगों द्वारा स्वामी को *पोकाला* (बलि) तथा *करीबुतु* (एकांत उपहार) देते हुए प्रकट होती है, जिसके माध्यम से वह उसे उपहार विनिमय संबंध में संलिप्त होने के लिए उकसाने की इच्छा का प्रदर्शन करते हैं, जिसमें उनके द्वारा वांछित वस्तु भी शामिल होती है। इसलिए, कुला विनिमय में उपहारों एवं जवाबी–उपहारों की एक जटिल प्रणाली है, जिसके नियम किसी प्रथा द्वारा निर्धारित होते हैं। यह प्रणाली विश्वास पर आधारित होती है, चूंकि दायित्त्व यहाँ कानूनी रूप से लागू नहीं होते हैं, हालांकि वह विनिमय पक्षों (करायेताऊ, "भागीदार") के बीच एक प्रगाढ़, जीवन–पर्यंत आदर्श संबन्धों को स्थापित करते हैं। कुला का एक छल्ले जैसी संरचना में विभिन्न द्वीपसमूहों में विनिमय किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप बहुमूल्य *कुला रिंग* नामक वस्तु का नाम अस्तित्त्व में आया, जो कि लाल रंग के खोल–चक्र वाले हारों (*वेगुन* अथवा *सोलावा*) से मिलके बना था, जिनका व्यापार उत्तर दिशा में (छल्ले को घड़ी की दिशा में गोलाकार बनाकर) किया जाता था तथा श्वेत खोल हथछल्ले (*स्वाली*) जिनका व्यापार दक्षिण दिशा में किया जाता था। कुला बहुमूल्यों के विनिमय के साथ साथ अन्य वस्तुओं का भी व्यापार किया जाता था जिन्हे *गिंवली* (वस्तु–विनिमय) के नाम से जाना जाता था। *द गिफ्ट* (1925) पुस्तक, जिसपर मलिनोस्की के कार्यों की बहस हुई तथा उसका विस्तार हुआ, के लेखक मरकेल मोस ने इस बात पर बल दिया है कि उपहारों का लेन–देन व्यक्ति–विशेषों के बीच नहीं होता था, बल्कि बड़े संघों के प्रतिनिधियों के बीच होता था। उन्होने इस बात पर तर्क दिया कि उपहार एक तरह से 'सम्पूर्ण प्रदर्शन' होते थे चूंकि वह सरल, क्रय एवं विक्रय करने के लिए अदला–बदली करने योग्य वस्तुएँ नहीं होती थी, बल्कि 'मुकुट आभूषणों' जैसी होती थी, जिसमे प्रतिष्ठा, इतिहास तथा किसी 'समष्टिगत परिवार समूह' की पहचान का बोध कराना भी अंतरनिहित होता था। ऐसा करना सबन्धों की एक प्रणाली को आगे लेकर आया जिसने व्यापार सहित, एक बड़े प्रथागत संजाल की प्रक्रिया का प्रतिनिधीत्त्व किया।

आज के भूमंडलीकरण के युग में, पूंजीवादी अर्थव्यवस्था अपना प्रभुत्त्व स्थापित कर रही है अथवा सभी प्रकार के बाज़ारों को अपने प्रभाव में ले रही है, फिर भी हमें मलिनोस्की के द्वारा किए गए रहस्योद्घाटनों के समानान्तर संदर्भ देखने को मिलते हैं। विनिमय की आर्थिक एवं सामाजिक लागतों में, व्यापार में शामिल भागीदारों के बीच, भरोसा एवं विश्वसनीयता की भावना को स्थापित करना, ऋण के लिए आग्रह अथवा उसमें विस्तार करना, आपूर्ति के स्रोतों के आश्वासन देना, समझौतों के अनुपालन को लागू करवाना, श्रमिकों की भर्ती करना, मुनाफा बांटना, कर्मचारियों की

निगरानी करना, बाज़ार की स्थितियों के बारे में जानकारी एकत्रित करना, संपत्ति अधिकारों को बनाना अथवा लागू करना, जोखिम प्रबंधन करना, एवं अन्य शामिल होता था (गीर्ट्ज़, 1978)। "सामाजिक संरचना के विभिन्न स्वरूप जो बाज़ारों को बनने एवं आर्थिक लेन–देन करने में समर्थ बनाते हैं, जिनकी संकल्पना बहुधा –उन मानव विज्ञानियों द्वारा, जो कि संस्थागत अर्थशास्त्र एवं सामाजशास्त्र से प्रभावित रहते हैं – 'शासन संरचनाओं,' के रूप में की जाती है; ये वह संस्थागत ढांचे हैं जो आर्थिक गतिविधियों को व्यवस्थित, बाध्य एवं समन्वित रखते हैं, जो कुछ व्यवहारों का अनुमोदन करते हैं तथा अन्य को प्रोत्साहन प्रदान करते हैं। विभिन्न शासन संरचनाएं– बाज़ार आधारित सम्बन्धों के विभिन्न रूप, व्यापार संगठनों के विभिन्न रूप– 'लेन–देन लागतों' में आनेवाली सामाजिक एवं आर्थिक एकीकरण प्राप्त करने की चुनौतियों के लिए विभिन्न समाधान प्रदान करती हैं, जो सभी आर्थिक सस्थानों को वहन करनी चाहिए। इसलिए, शासन संरचनाएं वह सामाजिक संस्थान एवं मानकों की प्रणालियाँ होती हैं जो मानवविज्ञानियों से अन्य दूसरे संदर्भों में सुपरिचित होती हैं तथा इसी तरह के सामाजिक एवं सांस्कृतिक विश्लेषणों का विषय बनती हैं। शासन संरचनाओं की श्रृंखला एक सैद्धांतिक निरंतरता से लेकर 'बाज़ार शासन' और 'पदानुक्रम का शासन' तक फैली हुई है" (बेस्टोर, 2001:9228)।

अपनी प्रगति जांचें

1. बाज़ार क्या होता है? इसके कुछ गुण लिखिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. बाजार और मार्केट प्लेस में क्या अंतर है?

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

3. बाज़ार लगने की जगह का स्थानिक, पारस्परिक एवं आवंटन आधारित विश्लेषण करते समय मानवविज्ञानी किस बात का अध्ययन करते हैं?

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

4. बाजार के मानवशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य की कुछ विशिष्टताएँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

मानवविज्ञानी नृवंशविज्ञान की दृष्टि से संस्थागत प्रणालियों के रूप में बाजारों की सामाजिक संरचना, बाजार सहभागियों के लेन–देन व्यवहार और व्यापार भागीदारों के बीच या बाजारों के बीच के नेटवर्क पर ध्यान केंद्रित करते हैं (प्लेटनर, 1985)। वह इस बात पर बल देते हैं कि कैसे आर्थिक गतिविधि सामाजिक संस्थानों एवं सम्बन्धों में आत्मसात है, जो आर्थिक समस्याओं के निदान की संरचना भी करती है (एचेसन, 1994)। मानवशास्त्रीय अंतर्दृष्टि उस तरीके को सामने लाती है जिसमें विभिन्न समुदायों और लोगों की अपनी विश्वास प्रणाली होती है। इस ज्ञान और लोगों तथा समुदायों की समझ से लैस मानवविज्ञानी एक क्रॉस सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य प्रदान कर सकते हैं और विभिन्न विपणन प्रथाओं के बीच तालमेल बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। जैसा कि हम मानवविज्ञान के व्यवहारिक पहलुओं में आगे बढ़ते हैं, आइए हम देखें कि बाजार को समझने के लिए अनुसंधान पद्धति और मानव विज्ञान के तरीकों का उपयोग कैसे किया जाता है।

5.2 बाजारों को समझने में मानवविज्ञान का पद्धतिगत योगदान

"बाज़ारों के मानवविज्ञान आधारित विश्लेषण बहुधा नृवंशवैज्ञानिक ढंग से बाज़ार लगने वाली जगहों पर केन्द्रित होते हैं जबकि बाज़ारों के प्रति मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण कभी–कभी व्यवहार को व्यवस्थित करने के ढांचों के रूप में, विनिमय सम्बन्धों के मात्रात्मक विश्लेषणों पर भरोसा रखते हुए विनिमय के औपचारिक गुणों पर केन्द्रित होते हैं। हालांकि, मानवविज्ञानी सामान्यतः उन विश्लेषणों को व्यापक नृवंशविज्ञान आधारित संदर्भों में समाहित करके ही चलते हैं, जो मार्केट प्लेस (बाज़ार लगने की जगहों) को विशिष्ट स्थानों एवं सामाजिक ढांचो के रूप में देखते हैं, जिनका चरित्र–चित्रण मात्र उनमें तथा परस्पर होने वाले आर्थिक विनिमयों द्वारा ही नहीं अपितु सांस्कृतिक गतिविधियों एवं राजनैतिक अभिव्यक्तियों की रणभूमियों, जानकारी के प्रवाह में ग्रंथियों, ऐतिहासिक एवं सांस्कारिक महत्त्व, तथा सामाजिक भागीदारी के केन्द्रों के रूप में भी किया जाता है, जहां विविध प्रकार के सामाजिक, आर्थिक, वांशिक, तथा सांस्कृतिक समूह आकर जुडते हैं, भिड़ते हैं, सहयोग करते हैं, साँठ–गांठ करते हैं, प्रतिस्पर्धा करते हैं, तथा संघर्ष करते हैं" (बेस्टोर, 2001:9227)। बाज़ारों का मानवविज्ञान आधारित अध्ययन बहुधा नृवंश केन्द्रित होता है परंतु एक समग्र दृष्टिकोण में ही। मानव विज्ञानी एवं समाजशास्त्रीय विश्लेषण सामाजिक व्यवस्था एवं सांस्कृतिक आशय की वर्तमान में चालू संरचनाओं में बाज़ारों की इसी 'समाविष्टता' की बात पर बल देते हैं (पोलनी एवं अन्य, 1957; ग्रेनोवेटर, 1985); अर्थात, "आर्थिक व्यवहार का विश्लेषण मानव गतिविधियों के एक स्वायत्त क्षेत्र के रूप में ही नहीं किया जाता, बल्कि व्यापक विभिन्न प्रकार के सामाजिक, सांस्कारिक तथा अन्य सांस्कृतिक व्यवहारों,

संस्थानों एवं अस्थाओं के साथ अविभाज्य रूप से मिश्रित होने की दृष्टि से भी किया जाता है" (बेस्टोर, 2001:9227)।

मुख्य स्थान सिद्धान्त ('सेंटर प्लेस थियरी') उपनिवेशों ('मुख्य स्थान') में पदानुक्रमों में व्याप्त बाज़ारों के स्थानिक आवंटन का विश्लेषण करता है, तथा जिसे मानव विज्ञान में किसान बाज़ार प्रणालियों पर तथा शहरी बाज़ारों में परस्पर सबंधों पर लागू किया गया है। बाज़ार प्रणालियों के साथ व्यापार स्वरूपों के संरेखणों को स्थानीय, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय संगठन के विभिन्न प्रकार के सामाजिक, राजनैतिक, प्रशासनिक एवं सांस्कारिक पहलुओं के महत्त्वपूर्ण संकेतकों के रूप में दर्शाया गया है। 'क्षेत्रीय विश्लेषण' के रूप में भी जाने जाने वाले इस दृष्टिकोण को मानव विज्ञान में स्किन्नर द्वारा चीन में नृवंशविज्ञान आधारित एवं ऐतिहासिक शोधकार्य तथा मेसो–अमरीकन तथा और जगहों पर किया गए विस्तृत अध्ययनों द्वारा विकसित किया गया था (स्किन्नर, 1977)।

इसके अतिरिक्त, शोध विधियों के क्षेत्र में, ब्रोनिसलो मलिनोस्की (पिछले भाग में उल्लिखित) का मानव विज्ञान में बहुत योगदान (ट्रोब्रियांड द्वीपसमूहों के अपने अध्ययन द्वारा) रहा तथा बाज़ारों के बारे में समझ बनाने के क्षेत्र में क्षेत्रीय कार्य, सहभागी अवलोकन तथा नृवंशविज्ञान के महत्त्व के क्षेत्र में कार्यप्रणाली आधारित अपना योगदान किया, जो आगे चलकर इसकी स्थापना एक व्यावसायिक क्षेत्र के रूप में करता है। मानवविज्ञान निरंतर बाज़ार के विषयों से जुड़ा रहा, अपने उपक्षेत्रों अर्थात 'आर्थिक मानवविज्ञान', 'औद्यौगिक मानवविज्ञान', 'कार्य का मानवविज्ञान' के माध्यम से अथवा 1980 के दशक में उपभोक्ता व्यवहार एवं विपणन संबन्धित अनछुए 'व्यापारिक मानवविज्ञान' से होकर 'उद्योग में व्यावहारिक मानवविज्ञान' के माध्यम से, जो अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान एवं मुख्य धारा के अर्थशास्त्र में संलिप्तता का एक अत्यावश्यक क्षेत्र बन गया। जॉन एफ. शेरी, जूनियर. (1989) लिखते हैं कि "आर्थिक मानवविज्ञानियों के काम से मेल–जोल रखना, सभी प्रकार के समाजों में विपणन संबंधी व्यवहारों को समझने में विपणकों एवं उपभोक्ता क्षोधकर्ताओं को बड़े पैमाने पर सहायता प्रदान कर सकता है तथा प्रत्येक प्रकार के समाज जैसे स्थानीय अथवा बाहरी, निजी अथवा अभिशासनिक उद्यमियों एवं "विकासकों" में व्यवहारात्मक, मानवोचित, सांस्कृतिक दृष्टि से उपयुक्त हस्तक्षेप को सुविधाजनक बना सकता है। इसके विपरीत मानव विज्ञानियों के लिए, विपणकों के काम एवं उपभोक्ता शोधकर्ताओं के साथ मेल–जोल रखना जटिल समाज में आर्थिक व्यवहार की एक पूरी श्रृंखला को समझने एवं उसकी व्याख्या करने में सहायक होता है"। कई आर्थिक मानवविज्ञानियों ने बोरड्यू के 'रूचि', 'विशिष्टता', तथा 'सांस्कृतिक पूंजी' पर उनके दृष्टिकोणों का, समसामयिक शहरी जीवन को आकार देनेवाली बाज़ारों की सांस्कृतिक शक्ति की जांच-पड़ताल करने के प्रारम्भ के रूप में उपयोग किया। उपभोग के मानवविज्ञान का आह्वान औपचारिक रूप से डगलस (1976) द्वारा किया गया, जिन्होने बलपूर्वक तर्क दिया कि उपभोक्ताओं के उद्देश्यों का एक व्यवस्थित लेखा– जोखा अभी तक प्रदान नहीं किया गया है, तथा यह भी कि कोई भी प्रस्तावित लेखा–जोखा सामान के उपयोग के एक संचार सिद्धान्त के साथ अनवरुद्ध होना चाहिए। इस बात पर विश्वास रखते हुए कि उपभोग अंततः शक्ति से संबद्ध है, डगलस और इशरवूड (1979) ने किसी उपभोक्ता के व्यक्तिगत अध्यारोही उद्देश्य को, "साझा सभ्यताओं" में समावेश को सुनिश्चित करने के लिए बदलते सांस्कृतिक परिदृश्य के बारे में सूचना के प्राप्त करने तथा उसे नियंत्रित करने के रूप में देखा। सूचना के विनिमय से लेकर उपभोग के

अन्य पहलुओं के बहिष्कार अथवा उपेक्षा पर ध्यान केन्द्रित होने से, अन्य शोधकर्ताओं को अतिरिक्त जांच–पड़ताल करने का प्रारम्भ बिन्दु मिल गया है तथा एक ऐसा प्रासंगिक ढांचा बना जिसमें वह अपने किए गए अध्ययनों को समाहित कर सकें। अमोल्ड (वालेनडोर्फ एवं अमोल्ड 1988), मैकक्रेकन (1986, 1988) एवं शेर्री (1986) जैसे मानवविज्ञानियों ने उपभोग की घटनाओं के संरचनात्मक एवं प्रक्रियात्मक पहलुओं का अन्वेषण करने के लिए एक सांस्कृतिक दृष्टिकोण का उपयोग किया है, जबकि अप्पादुरई (1986) एवं उनके सहकर्मियों ने "सामाजिक जीवन" में उपभोग की वस्तुओं की पड़ताल शुरू की है।

संस्कृति के स्तर पर एक तुलनात्मक शोध किया जाना भी प्रस्तावित है (मूइज़, 2004)। मैकक्रेकन (1990) यह दर्शाते हैं कि कैसे उपभोग प्रक्रिया का एक सम्पूर्ण अर्थ है जो संस्कृति से संबद्ध है। मैकक्रेकन के लिए उपभोग को व्यापक दृष्टि से उन प्रक्रियाओं को समाहित करने के लिए परिभाषित किया जाता है जिसके माध्यम से उपभोक्ता द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं कर निर्भाव, खरीद, अथवा उपयोग किया जाता है। मैकक्रेकन के अनुसार, संस्कृति एवं उपभोग के बीच का संबंध गहनतापूर्वक तीन संदर्भों में परस्पर संबन्धित हैः इतिहास, सिद्धान्त एवं व्यवहार। इस तरह, मानव विज्ञान तथा विशेषतः इसकी नृवंशविज्ञान आधारित विधियाँ बढ़ते क्रम में लोकप्रिय स्रोत बनती जा रही हैं, जिनसे 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से ही विपणन एवं उपभोक्ता व्यवहार की जांच–पड़ताल के लिए उपकरण बनाए जा रहे हैं (ओल्सेन, 1955)।

व्यापार एवं अन्य संगठन बड़ी मात्रा में मानवविज्ञानियों तथा अन्य नृवंशविज्ञान–उन्मुख सामाजिक वैज्ञानिकों की भर्ती कर्मचारियों, सलाहकारों तथा परामर्शदाताओं के रूप में कर रहे हैं जो कि उपभोक्ता–अंतर्दृष्टि के अनुसार उत्पाद तथा विपणन की रूप–रेखा बनाने में अथवा निगमित नृवंशविज्ञान के एक शोधकर्ता के रूप में सांगठनिक व्यवहार, कार्य रूप–रेखा अथवा व्यापार/विपणन और सांगठनिक रणनीतियों पर काम करते हुए तथा उस प्रक्रिया में एथनोग्राफिक प्रयोग की प्रकृति के बारे में पुर्नचिंतन करते हुए शोधकर्ता के रूप में कार्यरत हैं।

चूंकि नृवंशविज्ञान एक गहनपूर्वक समय लेने वाली प्रक्रिया है तथा उपभोक्ता आधारित शोध, अति–प्रतिस्पर्धात्मक बाज़ार में त्वरित सूचना के प्रति अपडेट रहने के लिए प्रतिबद्धता दर्शाती है, इसलिए विपणकों ने एक छोटी समयावधि में ही मानवविज्ञानी दृष्टिकोण से सफलतापूर्वक अनेकों पहलुओं को अपनाया है। इसका जो परिणाम निकलता है, उसे नृवंशविज्ञान नहीं कहा जा सकता है (न ही उनका स्वरूप ऐसा है), हालांकि, यह समान्यतः विपणको को किसी बाज़ार विशेष में उपभोक्ताओं के विश्वास एवं व्यवहारों की प्रेरक शक्तियों को समझने में सहायता करने में अपने आप में सम्पूर्ण है (तियान, 1998)। इस बात का दावा किया गया है कि नृवंशविज्ञान को एक पुल के रूप में उपयोग करने के सिवा कोई भी ऐसा बेहतर उपाय नहीं है जिसके माध्यम से उस विषय के उपभोक्ता अथवा अन्य किसी मार्केट प्लेस के हितधारक के निकट पहुंचा जा सके।

मानवशास्त्रीय विपणन (मार्केटिंग) अनुसंधान में अवलोकन एक प्रमुख विधि है। इस कौशल का उपयोग मात्र नृवंशविज्ञान की परंपरागत विधि में ही नहीं किया जाता, बल्कि अधिक उच्च तकनीक प्रणालियों में भी किया जाता है जैसे अपने प्रकृतिक आवासों पर उपभोक्ताओं की विडियो टेप बनाना। मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण के अंतर्गत उपभोक्ता के व्यवहारों को देखना एवं उन व्यवहारों को समझने के लिए तकनीकों का

उपयोग करना, दोनों आता है (शेर्री, 1995)। साक्षात्कार, एक अन्य विधि है जिसका उपयोग मानवविज्ञानियों ने प्रभावशाली ढंग से उपभोक्ताओं को समझने के लिए किया है। बहुत विस्तार से इस बात की रिकॉर्डिंग करने के बाद कि लोग कैसे रहते हैं तथा उत्पाद कैसे उनके जीवन में उपयुक्त होते हैं, मानव विज्ञानियों को बहुधा उपयोगी जानकारी मिल जाती है, जिसे अन्यथा एक औपचारिक साक्षात्कार के माध्यम से सरलतापूर्वक प्राप्त नहीं किया जा सकता। ग्रिफिथ (1998) ने अर्थ–संरचित साक्षात्कार तकनीक का उपयोग करते हुए क्रेताओं एवं विक्रेताओं के बीच जॉर्डन के सेंट्रल मार्केट प्लेस (केन्द्रीय बाज़ार वाली जगह) पर शोधकार्य किया तथा उदाहरण के साथ इस बात की व्याख्या की कि कैसे संस्कृति अनेकों में से कुछ प्रकार से परंपरा–आधारित समाजों में, एक खुदरा संरचना के किसी एक पहलू को प्रभावित कर सकती है। इसी तरह के एक अन्य अध्ययन में, रोसीटर एवं शेन (1998) ने पाया कि जातीयता व्यापार करने एवं उपभोग में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। "मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण अधिक व्यक्तिपरक एवं गुणात्मक विधियों का उपयोग करता है, जो कि अनेक संदर्भों में अमूल्य हैं। अब्राम्स (2000) इस बात की ओर इंगित करते हैं कि हो सकता है कि कुछ परिस्थितियों में मात्रात्मक विश्लेषण, निर्णयकर्ताओं को, उपभोक्ताओं को वास्तविक ढंग से समझने में सहायता प्रदान ना करे, जबकि "वर्णनात्मक मानवविज्ञान" (गुणात्मक एवं पर्यवेक्षणीय) शोध कई बार खुलासा करने वाली अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। हाल के वर्षों में, मानवविज्ञान से प्रेरित शोध युक्तियाँ उपभोक्ता शोधकार्य में बढ़ते क्रम में प्रमुख हो गयी हैं। उदाहरण के लिए, थॉम्पसन और हिर्शमैन (1995) ने आधुनिक शहरी समाज में उपभोक्ताओं के शरीर की छवियों और आत्म–देखभाल प्रथाओं के बारे में उपभोक्ताओं की आत्म–धारणा का अध्ययन करने के लिए क्लासिक मानवविज्ञान सिद्धांतों को लागू किया ताकि विपणक को उपभोक्ता "सामाजिक शरीर" और उपभोग व्यवहार के बीच संबंधों को समझने में मदद मिल सके। मैकफर्लेन (2001) का मानना है कि जब किसी नए उत्पाद के लिए उपभोक्ता की प्रतिक्रिया निर्धारित करने की आवश्यकता होती है, तो कंपनियां परंपरागत रूप से गुणात्मक फोकस समूह (एक अन्य गुणात्मक विधि) की ओर रुख करती हैं (तियान, 2005:37)।

मानव विज्ञान ने अंतरराष्ट्रिय व्यापारों को विविध संस्कृतियों को समझने में सहायता प्रदान की है ताकि वह विभिन्न संदर्भों में प्रभावशाली ढंग से संचालन कर पाएँ। मानव विज्ञान आधारित विधियों के प्रभावशाली उपयोग ने उपभोक्ता एवं विपणन शोधकार्य पर एक महत्त्वपूर्ण छाप छोड़ी है, हालांकि यह एक ऐसे क्षेत्र के रूप में बना रह जाता है जहां मानव विज्ञानियों को नैतिक चेतना के साथ सावधानीपूर्वक चलने की आवश्यकता है।

5.3 बाज़ार के मानवविज्ञान में नैतिक विमर्श

मानव विज्ञान के व्यावहारिक पहलू को एक नैतिक समीक्षा में संलिप्त होना पड़ता है चूंकि इसमें लोगों को प्रभावित करने की अपार क्षमता है। मानव विज्ञानियों को एक नाजुक रेखा को लांघना पड़ता है यह सुनिश्चित करने के लिए कि यह प्रभाव किस दिशा में होता है। विपणन एवं उपभोक्तावाद की आर्थिक परिधि में मानवविज्ञानी उपयोगों को मुख्य धारा में लाने और वैश्विक पूंजीवाद की ओर बढ़ावा देता है, अतः यह घरेलू एवं स्वदेशी सीमाओं के ऊपर से प्रवाह करने लगता है। बाज़ार अनुसंधान में सेवारत सामाजिक विज्ञान तकनीकों पर अक्सर, समसामयिक उपभोक्ताओं में अलगाव एवं निर्भरता फैलाने का दोषारोपण ठीक उसी प्रकार किया जाता है जैसे

सिसली के किसानों के बीच उपस्थित माफियाओं पर किया जाता है (गैट एवं स्मिथ, 1976)। क्या बाज़ारों का तथाकथित वैश्वीकृत होना (जो देखा जा रहा है), एक वांछित, अपरिवर्तनीय प्रवृत्ति है, जिसके परिणामस्वरूप सभी भागीदारों के जीवन की संभावनाओं में सुधार होता है, तथा जिसे मानकीकृत विपणन हस्तक्षेपों द्वारा उत्प्रेरित एवं प्रबंधित किया जाना चाहिए (लेविट, 1983), अथवा प्रगति की जातीयकेन्द्रित संकल्पनाओं की एक अवांछित, प्रतिवर्ती अभिव्यक्ति मात्र है जो अपने अनिच्छुक व्यंजनों के पारिस्थितिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संतुलन को बाधित करती है, तथा जिसे प्रबुद्ध सामाजिक नीति द्वारा अवरुद्ध अथवा पुनःप्रेषित किया जाना चाहिए (बामेट तथा मूलर, 1974; बोडले 1982), जो कि एक ऐसा विषय है जिसमें अन्वेषण करने की तत्काल आवश्यकता है (शेर्री 1987)।

नैतिकता एवं सामाजिक उत्तरदायित्त्व के बीच की दरार को उन विपणन निर्णयों के नतीजों का अध्ययन करके भरा जा सकता है, जिनका समर्थन सामाजिक वैज्ञानिक शोधकार्य ने किया। विपणन में आवश्यकता होती है "सिद्धान्त संचालित कार्यक्रम आधारित शोधकार्य के प्रति अधिक प्रतिबद्धता की, जो संज्ञानात्मक एवं सामाजिक रूप से महत्त्वपूर्ण समस्याओं का समाधान देने पर लक्षित होती है" (एंडरसन, 1983)। शोधकार्य में उपभोक्ता की मांग का सही आंकलन करने तथा व्यक्ति विशेष एवं प्रणालीगत स्तरों के प्रति दीर्घकालिक नतीजों की प्रतिपुष्टी प्रदान करने के लिए एक सूचित उपभोक्ता सहमति, साधारण उद्देश्यों की एक स्पष्ट समझ, एवं तुलनात्मक नीतिशास्त्र में एक प्रोत्साहित अभ्यास की आवश्यकता होती है। "उपभोग एवं विपणन के क्षेत्र में किए गए शोध में उन कारकों को जो व्यापारजनित बीमारी (गेरलैक, 1980), आहार–विषयक पतन (व्हाइटफोर्ड, 1983), सामाजिक विघटन (जिसमें थोपा गया उत्प्रवास, अकुशलता, घरेलू अपघटन, इत्यादि शामिल हैं) नवीन अंतर्राष्ट्रीय श्रम एवं अपशिष्ट विभाग का परिचारक तथा संसाधनों के अकुशल उपयोग में योगदान देते हैं, तथा उन निष्कर्षों को जिनका उपयोग इन समस्याओं के लिए विपणन उन्मुख समाधानों की रूप–रेखा तैयार करने के लिए किया जाता है, शामिल किया जा सकता है" (शेर्री, जूनियर. 1989:559)।

इसमें भी निस्संदेह महत्त्वपूर्ण ढंग से मानवविज्ञानी योगदान दे रहा है। शेर्री (1983) इस बात की ओर इंगित करते हैं कि "कुछ हद तक जहां औद्योगिक पूंजीवाद के प्रसार को "विश्वभर के गरीबों को हाशिये पर रखने एवं उनकी निर्धनता" के लिए दोषी ठहराया जा सकता है (होबेन, 1982), हम निगमित उद्यमों की आलोचना करते आए हैं, जो स्वदेश और विदेश दोनों जगह मताधिकार की प्रक्रियाओं के लिए ईंधन का काम करता है। जब सरकारें अस्थिर हो गयी हैं (जैसे कि चिली में), जब उपभोक्ताओं का स्वास्थ्य खतरे में पड़ गया है (तीसरी दुनिया के देशों में शिशु केन्द्रित दवा एवं विभिन्न दवाओं के विपणन के रूप में), जब उत्पाद स्वस्थ सामाजीकरण के लिए एक खतरा बन जाएँ (जैसे कि क्लस्टर रिवेंज जैसे विडियो गेम्स का विपणन), जब संस्कृति में परिवर्तन स्वयं बेकार हो जाए (जैसे कि अवर्धित "अमेरीकन ड्रीम" के बारे में हैरिस का वृत्तान्त), तब मानव विज्ञानियों ने व्यापारसंघों को इस कार्य में सम्मिलित किया। "व्यावसायिक गतिविधियों के सामाजिक प्रभाव का आकलन करने के लिए, गंभीर रूप से मूल्यांकन और दोषीता का आकलन करने की यह परंपरा, तौसीग (1980) में ज्ञानमीमांसा और व्यवहार के कमोडिटी फेटिशिज्म (वस्तु के प्रति अंधभक्ति) द्वारा शकिंग की वाक्पटु चर्चा में परिणत हुई है" (पृष्ठ 25)। वह कहते हैं कि "मानव विज्ञान को "संकीर्ण, प्रतिक्रियात्मक पक्षपोषक की अलग–थलग रूप से काम करने

वाली भूमिका से ऊपर उठकर देखना होगा तथा एक व्यापारिक सांगठनिक स्तर पर मानवीय रणनीतिक योजनाओं के प्रारूपण एवं उनके कार्यान्वयन करने के एक अधिक सक्रिय, सलाहकार की भूमिका के रूप में कल्पना करनी होगी" (शेर्री, जूनियर. 1989:558)। इस दिशा में शेर्री, जूनियर. (1989) लिखते हैं कि "अध्ययन विषयों की संधि करने के लिए, तीव्रतम एवं सर्वाधिक फलदायक नीति होगी, विपणकों एवं उपभोक्ता शोधकर्ताओं को पक्षपोषण के प्रति मानव विज्ञानियों की पूर्वानुकूलता के बारे में सचेत करना तथा मानवविज्ञानियों को मात्र सामाजिक, स्थूल एवं गैर–लाभांश विपणन ही नहीं बल्कि, उपभोक्ता शोध और इसके साथ व्यावहारिक उपभोक्ता शोध में रूचि रखने वाली विभिन्न नियामक संगठनों को भी सचेत करना" (पृ.559)।

अपनी प्रगति जांचें

5. मानव विज्ञान में बाज़ारों के अध्ययन हेतु ब्रोनिसलो मलिनोवस्की द्वारा दिये गए दो महत्त्वपूर्ण योगदान क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

6. मैरी डगलस का मूल तर्क क्या था जब उसने उपभोग के मानव विज्ञान का आह्वान किया?

.....

.....

.....

.....

.....

7. व्यावसायिक घराने मानवविज्ञानियों को क्यों नियुक्त करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

8. उपभोक्ता अनुसंधान करते हुए मानव विज्ञानी किस प्रकार एक नैतिक एवं सामाजिक रूप से जिम्मेदार व्यवहार का पालन कर सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

5.4 सारांश

बाज़ारों के अध्ययन में हमने बाज़ारों के बारे में गहन और व्यापक समझ बनाने तथा मानव विज्ञान के व्यावहारिक पहलुओं की कुछ नैतिक दुविधाओं एवं विमर्शो में अनेक मानवशास्त्रीय अंतर्दृष्टियों, कार्यप्रणाली के उपयोग एवं मानव विज्ञानी विधियों के लाभ को जाना है। हमने उपभोक्ता व्यवहार एवं विपणन को मानवविज्ञान एवं अर्थशास्त्र के बीच अंतर–परागण के एक सक्रिय क्षेत्र के रूप में देखा। इस वैश्विक संजालित (नेटवर्क) क्षेत्र में वह आभासीय क्षेत्र उल्लेखनीय है जो सदैव विस्तार की ओर अग्रसर है एवं जिसमें लोगों और समुदायों की सक्रिय संलिप्तता आवश्यक है। विभिन्न विपणन उपयोग जिनकी श्रृंखला उपभोक्ता वस्तुओं से लेकर, भोजन, निवेश, स्वास्थ्य इत्यादि तक फैली है। इसके अतिरिक्त, यहाँ पर एक दृष्टि निगमित नृवंशविज्ञान पर भी डाली गयी, जो कि समान रूप से अन्वेषण के लिए महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है जो उन बहुराष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संगठन के रूप में जो विभिन्न भौगौलिक स्थानों पर संचालन कर रही हैं, जिन्हें निरंतर इस बात के समर्थन के साथ-साथ सहायता चाहिए होती है कि कैसे इन भौगौलिक स्थानों के बीच पारगमन करने वाले उनके कर्मचारी किस प्रकार व्यवहार करने के साथ-साथ अपने आपको नए वातावरण में आत्मसात कर सकते हैं। अन्वेषन के लिए अन्य दूसरा फलदायक एवं महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है (सीएसआर) कॉर्पोरेट सोशल रेस्पॉन्सिबिलिटी/निगमित सामाजिक उत्तरदायित्त्व जहां व्यापारसंघ समुदायों के साथ सामाजिक प्रासंगिक उद्देश्यों के लिए संलिप्त होते हैं। मानव विज्ञानी इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण ढंग से आर्थिक मूल्यों एवं सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों के बीच विमर्श को आरंभ करते हुए अपना योगदान कर सकते हैं।

5.5 संदर्भ

Anderson, P. (1983). "Marketing, Scientific Progress, and Scientific Method".*Journal of Marketing*. 47 (4):18-31.

Appadurai, A (ed.). (1986). *The Social Life of Things*. New York: Cambridge University Press.

Bamet, R and R Muller .1974.*Global Reach: The Power of the Multinational Corporations*, New York: Simon and Schuster.

Barkin, D. (1983). "The Internationalization of Capital and the New International Division of Labor".*paper presented at the Thirty-second Annual Conference of the Center for Latin American Studies*, *University of Florida, Gainesville*.

Bestor, T. C.(2001). "Markets: Anthropological Aspects" .*International Encyclopedia of the Social & Behavioral Sciences***.**Elsevier Science Ltd. 9227-9231.

Bodley, J. (1982). *Victims of Progress*. Mayfield, CA: Palo Alto.

Choate, P and J Linger. (1988). "Tailored Trade: Dealing With the World as It Is". *Harvard Business Review*. 88(l):86-93.

Douglas, M. (1976).“Relative Poverty-Relative Communication”. In A.H. Halsey (ed.) *Traditions of Social Policy: Essays in Honour of Violet Butter*, Oxford: Basil Blackwell. 197-215.

Douglas, Mary and Baron Isherwood. (1979).*The World of Goods*. New York: Basic Books.

Fernandez-Kelly, M. (1983). “Contemporary Production: Seven Features and One Puzzle”. *paper presented at the Thirty-second Annual Conference of the Center for Latin American Studies, University of Florida, Gainesville*.

Gait, A and L Smith.(1976). *Models and the Study of Social Change*. New York: John Wiley.

Gerlach, L.1980. “The Flea and the Elephant: Infant Formula Controversy”. *Society*.17 (6): 51-57.

Granovetter, M. (1985). “Economic action and social structure: The problem of embeddedness”. *American Journal of Sociology*. 91(3): 481–510.

Geertz, C. (1978). “Bazaar economy: Information and search in peasant marketing”.*American Economic Review*. 68(2): 28–32.

Griffith, D. (1998). “Cultural Meaning of Retail Institutions: A Tradition-Based Culture Examination”. *Journal of Global Marketing*. 12 (1): 47–59.

Gudeman, S. (2001).*Anthropology of Economy: Community, Market, and Culture*.Oxford **:**John Wiley & Sons.

Hoben, Allen.(1982). “Anthropologists and Development”.*Annual Review of Anthropology*.11: 349-374.

Levitt, T. (1983).*The Marketing Imagination*. New York: The Free Press.

Olsen, B. (1995). “Brand Loyalty and Consumption Patterns”. In J.F. Sherry (ed.) *Contemporary Marketing and Consumer Behavior: An Anthropological Sourcebook*. Thousand Oaks, CA: Sage Publications, Inc.

Plattner, S (ed.).(1985). “Markets and Marketing”.In *Monographs in Economic Anthropology, no. 4.Society for Economic Anthropology*. Lanham, MD: University Press of America.

Plattner, S (ed.).(1989). *Economic Anthropology*. Stanford, CA: Stanford University Press.

Polanyi, K., Arensberg, C. W and H. W. Pearson (eds.). (1957). *Trade and Markets in the Early Empires: Economics in History and Theory*. Glencoe, IL:The Free Press.

McCracken, G. (1986). "Culture and Consumption: A Theoretical Account of the Structure and Movement of the Cultural Meaning of Consumer Goods". *Journal of Consumer Research*. 13(1): 71-84.

McCracken, G. (1990). *Culture and Consumption: New Approaches to the Symbolic Character of Consumer Goods and Activities*. Indiana University Press.

Macfarlane, B. (1998).Business *Professors in Higher Education: Outsider Reputations, Insider Values.* [http://www.leeds.ac.uk/educol/documents/000000678.htm]

Mooij, M. (2004). Consumer Behavior and Culture:Consequences for Global Marketing and Advertising, Sage Publication

Rossiter, J.R. and A.M. Chan. (1998)."Ethnicity in Business and Consumer Behavior".*Journal of Business Research*. 42:127–34.

Safa, H. (1983). "Comments on Labor and Industry in the New Intemational Division of Labor".*paper presented at the Thirty-second Annual Conference of the Center for Latin American Studies, University of Florida, Gainesville.*

Sherry,J. (1983). "Business in Anthropological Perspective".*Florida Journal of Anthropology.*8 (2):15-36.

Sherry,J. (1986). "The Cultural Perspective in Consumer Research" In Richard Lutz (ed.) *Advances in Consumer Research, Vol. 13*. UT: Association for Consumer Research, 513-575.

Sherry,J. (1987). "Advertising as a Cultural System". In Jean Umiker-Sebeok (ed.) *Marketing and Semiotics: New Directions in the Study of Signs for Sale*. Berlin: Mouton de Gruyter. 441-461.

Sherry, Jr.J. F. (1989). "Observations on Marketing and Consumption: an Anthropological Note" In Thomas K. Srull (ed.) Advances in Consumer Research Volume 16. Provo, UT : Association for Consumer Research. 555-561.

Sherry, J. F. (1995). *Contemporary Marketing and Consumer Behavior: An Anthropological Source Book*. Thousand Oaks, CA: Sage Publications, Inc.

Skinner, G. W (ed.). (1977). *The City in Late Imperial China*. Stanford, CA: Stanford University Press.

Smith, C. A (ed.).(1976). *Regional Analysis Vols. 1 & 2*. New York: Academic Press.

Sprague, Carolyn and Demitri Shimkin. 1981. *How Midwesterners Cope: The East Urbana Energy Study*. Urbana, IL: Department of Anthropology, University of Illinois.

Taussig, M. (1980).*The Devil and Commodity Fetishism in South America*. Chapel Hill, NC: University of North Carolina Press.

Thompson, C. J., and E. C Hirschman. (1995). "Understanding the socialized body: A poststructuralist analysis of consumers' self-conceptions, body images, and self-care practices". *Journal of Consumer Research. 22*(2):139–153.

Tian, G. R. (1998). "Anthropological Research Among Chinese Refugees in Metro Toronto". *Cultural Anthropology Methodology*. 2.

Tian, G. R. (2005). Anthropological approach to consumer behavior: a marketing educational case of teaching and learning, *Journal for Advancement of Marketing Education*. 7:37-46.

Wallendorf, M and E Amould. (1988). "My Favorite Things: A Cross Cultural Inquiry into Object Attachment, Possessiveness and Social Linkage". *Journal of Consumer Research*. 14(4) 531-547.

Whiteford, M. (1983). "From Gallo Pinto to Jack's Snacks: Observations on Dietary Change in a Rural Costa Rican Village". *paper presented at the 82nd Annual Meeting of the American Anthropological Association, Chicago, IL.*

5.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

1. अनुभाग 5.0 को देखें।
2. उत्तर हेतु अनुभाग 5.0 का संदर्भ लें।
3. अनुभाग 5.1 के पैराग्राफ 1 को देखें।
4. अनुभाग 5.1 को देखें।
5. उत्तर हेतु अनुभाग 5.2 के पैराग्राफ 3 को देखें।
6. अनुभाग 5.2 के पैराग्राफ 3 को देखें।
7. अनुभाग 5.2 के पैराग्राफ 5 और 6 को देखें।
8. उत्तर हेतु अनुभाग 5.3 के अनुच्छेद 2 और 3 को देखें।

इकाई 6 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान एवं स्वास्थ्य*

इकाई की रूपरेखा

6.0 परिचय

6.1 स्वास्थ्य का मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण

6.2 स्वास्थ्य संवर्धन एवं प्रबंधन में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान की संभावनाएं

6.2.1 चिकित्सा में मानवविज्ञान

6.2.2 सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रबंधन

6.2.3 महामारी–विज्ञान

6.2.4 आणविक आनुवंशिकी

6.3 भारतीय परिदृश्य

6.4 सारांश

6.5 संदर्भ

6.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

अधिगम के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी सक्षम होंगे:

- स्वास्थ्य के बारे में मानवशास्त्रीय धारणा को परिभाषित करने में;
- स्वास्थ्य संवर्धन एवं प्रबंधन में संबन्धित ज्ञानक्षेत्र पर बल देते हुए व्यावहारिक मानवविज्ञान की भूमिका के बारे में अंतर्दृष्टि विकसित करने में; तथा
- भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य अनुसंधान के लिए अनुप्रयुक्त (व्यावहारिक) मानवविज्ञान के प्रयोग पर पकड़ बनाने में।

6.0 परिचय

हम जानते हैं कि मानवविज्ञान प्राथमिक रूप से समग्र एवं अनुभवजन्य है, जो क्षेत्र आधारित शोध पर केन्द्रित रहता है। मानव विज्ञानियों ने निरंतर ढंग से अपने ज्ञान को समग्रता के साथ उन मुद्दों का अन्वेषण किया है तथा उन्हे सुलझाने का प्रयास किया है जिनका सामना संसार भर में समुदायों एवं आबादी द्वारा किया जाता है। वह सदैव नीति–निर्माताओं (तथा सरकारी कर्मचारियों) एवं लक्षित समुदायों के बीच के अंतर को समाप्त करने का प्रयास करते हैं तथा समुदायों की उन्नति एवं विकास के लिए प्रभावशाली नीतियों को सूत्रबद्ध करने में सहायता प्रदान करते हैं।

अपनी समग्र दृष्टि के कारण, मानवशास्त्रीय अनुसंधान क्षेत्र अक्सर इतिहास, लोक प्रशासन, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र और तेजी से बढ़ते स्वास्थ्य विज्ञान के साथ ओवरलैप होता है। स्वास्थ्य विज्ञान के पेशेवर अक्सर सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रबंधन और

*योगदानकर्ता: डॉ. विजित दीपानी, परियोजना तकनीकी अधिकारी (वरिष्ठ अन्वेषक), राष्ट्रीय चिकित्सा सांख्यिकी संस्थान, भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली।

प्रचार में मानवविज्ञानी से परामर्श करते हैं। यह अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के विकास का मार्ग प्रशस्त करता है।

वे संस्थागत या सार्वजनिक स्वास्थ्य से संबंधित मुद्दों को हल करने के लिए मानवशास्त्रीय ज्ञान और विधियों (फील्डवर्क, प्रतिभागी अवलोकन, गुणात्मक शोध उपकरण, केंद्रित समूह चर्चा, गहन और प्रमुख मुखबिर साक्षात्कार, अर्ध–संरचित साक्षात्कार, और कई अन्य) का उपयोग करते हैं जिससे जोखिम वाले समूहों के अस्तित्व और भलाई को सुनिश्चित किया जा सके।

वे स्वास्थ्य, बीमारी एवं अस्वस्थता से जुड़े सभी पहलुओं को समग्रता के साथ समझने के लिए समर्पित होते हैं। वे स्वास्थ्य व्यवहार एवं संवर्धन तथा अस्वस्थता और सामाजिक विभाजनों (लिंग, सामाजिक वर्ग एवं जातीय संरचना) एवं स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच के बीच सम्बन्धों से संबन्धित मनोदृष्टि, आस्थाओं एवं धारणाओं को भी समझने का रूझान रखते हैं। ऐसा करना स्वास्थ्य सेवा से जुड़े पेशेवरों को विश्व भर में समुदायों के सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ के अनुकूल हस्तक्षेपण रणनीतियाँ विकसित करने में सहायता प्रदान करता है।

स्वास्थ्य के बारे में मानवशास्त्रीय धारणा को समझना सर्वोत्कृष्ट है ताकि स्वास्थ्य अनुसंधान और सेवाओं में अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान के दायरे के बारे में अंतर्दृष्टि विकसित की जा सके। इसके बाद अगले भाग में हम सीखेंगे: स्वास्थ्य के बारे में मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण क्या है? स्वास्थ्य संवर्धन और प्रबंधन में अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की भूमिका और कार्यक्षेत्र क्या है? हम भारतीय संदर्भ में स्वास्थ्य के लिए अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान के अनुप्रयोग पर भी ध्यान देंगे।

अपनी प्रगति जांचें

1. स्वास्थ्य अनुसंधान के क्षेत्र में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञानी क्या भूमिका निभाते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

6.1 स्वास्थ्य का मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण

स्वास्थ्य की संकल्पना को समझना तुलनात्मक ढंग से सरल है परंतु इसे अभिव्यक्त एवं परिभाषित करना कठिन है। हम में से अधिकतर लोग बीमारी (अथवा अशक्तता) की अनुपस्थिति होने को ही स्वास्थ्य की दृष्टि से देखते हैं। एक शरीर–रचना विज्ञानी स्वास्थ्य को सामान्य शरीर–रचना आधारित संरचनाओं के साथ जोड़कर देख सकता है। परंतु क्या ऐसा करना सम्पूर्ण ढंग से स्वास्थ्य को परिभाषित करता है? स्वास्थ्य की संकल्पना कहीं अधिक जटिल एवं गहरी है। यदि कोई व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक रूप से सक्रिय एवं स्वस्थ है, परंतु यदि उसकी सामाजिक स्थिति अच्छी नहीं है और वह वंचित है, तो वह सम्पूर्ण अथवा 'समग्र' स्वास्थ्य प्राप्त नहीं कर सकता/सकती।

बॉक्स.1: स्वास्थ्य की परिभाषा

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 1948 में स्वास्थ्य को "पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण की स्थिति के रूप में परिभाषित किया, न कि केवल बीमारी या दुर्बलता की अनुपस्थिति" के रूप में (डब्ल्यूएचओ, 2006)। उपरोक्त परिभाषा पूर्ण कल्याण की अवधारणा को सामने रखती है जो इस बात पर प्रकाश डालती है कि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के अलावा, सामाजिक कल्याण भी संपूर्ण स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण घटक है। शारीरिक स्वास्थ्य की अवधारणा 'एलोस्टेसिस' से जुड़ी हुई है यानी बदलती परिस्थितियों के माध्यम से शारीरिक होमोस्टैसिस के रखरखाव (शुलकिन, 2004)। मानसिक स्वास्थ्य के लिए परिभाषित मानदंड 'एकता की भावना' थी जो एक व्यक्ति को मजबूत मनोवैज्ञानिक तनाव से सफलतापूर्वक सामना करने और स्वस्थ होने और अभिघातजन्य तनाव विकारों को रोकने में मदद करती है (एंटोनोव्स्की, 1979: 1984)। सामाजिक स्वास्थ्य में लोगों की क्षमता और दायित्वों को पूरा करने, अपने जीवन का प्रबंधन करने और काम सहित सामाजिक गतिविधियों में शामिल होने की क्षमता शामिल है (*बिसेा*, 2013)।

अतः स्वास्थ्य के मूल सार को सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य के रूप में माना जा सकता है। स्वास्थ्य का अधिकार हमारा मौलिक मानव अधिकार है जिसमें स्वास्थ्य हमारी आयु, लिंग, सामाजिक–सांस्कृतिक अथवा वांशिक पहचान से बढ़कर हमारी सबसे मूल एवं अत्यावश्यक संपत्ति होती है (डबल्यूएचओ, 2006)।

यहाँ पर आइये अस्वस्थता एवं स्वास्थ्य में अंतर स्पष्ट करते हैं। अस्वस्थता सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ में बीमारी को अनुभव करना है। यह एक समाज के लिए व्यर्थ एवं निष्फल है चूंकि यह सामाजिक भूमिकाओं के प्रभावशाली निष्पादन को अवरुद्ध करती है। वहीं दूसरी ओर, स्वास्थ्य, समाज की कार्यपरक आवश्यकताओं में निहित होता है।

मानवविज्ञान शोध क्षेत्र के अंतर्गत स्वास्थ्य एक प्रमुख क्षेत्र (डोमेन) है। वह सैद्धांतिक दृष्टिकोण जो मानव स्वास्थ्य के बारे में वैचारिक समझ बनाने देती हैं, वह निम्न हैं: (क) महामारी–विज्ञान आधारित अथवा पारिस्थितिक (तथा जैव–सांस्कृतिक) दृष्टिकोण– यह दृष्टिकोण स्वास्थ्य को संस्कृति एवं प्रकृतिक वातावरण के बीच परस्पर क्रिया के एक परिणाम के रूप में देखता है एवं मूल्यांकन करता है; (ख) आलोचनात्मक चिकित्सीय मानवविज्ञान– यह दृष्टिकोण इस बात का मूल्यांकन करता है कि कैसे अर्थशास्त्र एवं राजनीति सामाजिक वर्ग एवं सामाजिक सम्बन्धों पर केन्द्रित रहते हुए मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं (ग) व्याख्यात्मक दृष्टिकोण– यह दृष्टिकोण अर्थ एवं व्याख्या को महत्त्व देता है, तथा इस बात की जांच करता है कि किस प्रकार संस्कृति प्रतीकात्मक अर्थ का उपयोग स्वास्थ्य प्रक्रियाओं की व्याख्या करने एवं उन्हे समझने के लिए करती है (हिल, 1985; ग्रोन्सेथ, 2009)।

अक्सर मानवविज्ञानी जैव–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का उपयोग एक समुदाय की स्वास्थ्य परिस्थिति का अध्ययन करने के लिए करते हैं। जैव–सांस्कृतिक दृष्टिकोण के अंतर्गत, मनुष्यों को पर्यावरण के संबंध में जैविक एवं सांस्कृतिक प्राणी माना जाता है (मेकेलरॉय, 1990)। मनुष्यों का अस्तित्व जैव–सांस्कृतिक ढंग से एकीकृत है तथा

उनका स्वास्थ्य जैविक एवं सांस्कृतिक गुणों में परस्परता का एक परिणाम है। इसके अतिरिक्त, सामाजिक–सांस्कृतिक एवं सामाजिक–जैविक सूक्ष्मताओं के बीच परस्परता, आनुवांशिक विशेषताएँ एवं पर्यावरणिक मानदंड समुदाय के स्वास्थ्य को परिभाषित करते हैं (रेग्मी, 2001)।

किसी समुदाय के स्वास्थ्य की स्थिति यह दर्शाती है कि कैसे कोई समुदाय अपने पर्यावरण के प्रति कितने अच्छे से अनुकूलित है (शारीरिक, जैविक, एवं सांस्कृतिक सम्मिलित करते हुए) (मीरा, 2007)। जैव–सांस्कृतिक अध्ययन, विभिन्न जनसांख्यिकीय, प्ररूपी एवं आनुवांशिक गुण जैसे प्रजनन–शक्ति, रुग्णता, मृत्यु–दर, आनुवांशिक लक्षण एवं संकेतक, मानवमितिक परिमापन एवं सूचकांक, रक्त–चाप, हीमोग्लोबिन इत्यादि जो कि विभिन्न पर्यावरणिक परिस्थितियों में मानव आबादी के स्वास्थ्य और उसकी उत्तरजीविता के संकेतक हैं, का उपयोग करते हैं (खोंग्सडीयर, 2007)।

प्रत्येक संस्कृति, अपनी जटिलता के स्तर के बावजूद, स्वास्थ्य की देखभाल एवं स्वास्थ्य की मांग करने वाले व्यवहार के बारे में स्वयं की एक समझ एवं आस्थाएं रखती है। इसे बहुधा "स्वास्थ्य संस्कृति" की संज्ञा दी जाती है (रेग्मी, 2001)। स्वास्थ्य की मांग करने वाला यह व्यवहार समुदाय की व्यापक सांस्कृतिक मनोदशा का एक अत्यावश्यक अंग है। लेंगडॉन एवं विक (2010) ने सुझाव प्रस्तुत किया कि "स्वास्थ्य की सांस्कृतिक प्रणाली" स्वास्थ्य के प्रतीकात्मक पहलू पर बल देती है तथा बीमारी को देखने, समझने, वर्गीकृत करने एवं उसकी व्याख्या करने के बारे में ज्ञान, आस्थाओं, मान्यताओं एवं अनुभूतियों को सम्मिलित करती है। प्रचलित स्वदेशी स्वास्थ्य सेवा प्रथाएँ, स्वदेशी औषधियों का उपयोग, निषिद्धताएं, आस्थाएं एवं अंधविश्वास, विश्वभर में विभिन संजातीय समूहों एवं समुदायों स्वास्थ्य की मांग करने वाले व्यवहार एवं स्वास्थ्य की स्थिति को परिभाषित करते हैं।

इसके अतिरिक्त सामाजिक वैज्ञानिकों एवं सामाजिक महामारी–वैज्ञानिकों ने, विगत वर्षों में सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटकों के एक पूरे व्यूह पर ध्यान केंद्रित किया है, जैसे स्वास्थ्य के प्रतिपक्षों के रूप में सामाजिक–आर्थिक स्थिति, लैंगिक भूमिकाएँ, उत्संस्करण, मानसिक–सामाजिक कार्य का वातावरण, सामाजिक संजाल एवं सहयोग, गरीबी एवं वंचन (ब्लेज़र एवं हर्नडेज, 2006)।

अपनी प्रगति जांचें

2. स्वास्थ्य के शारीरिक एवं सामाजिक घटकों का सार क्या है?

.....

.....

.....

.....

3. स्वास्थ्य के प्रति जैव–सांस्कृतिक दृष्टिकोण की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

4. '*स्वास्थ्य संस्कृति*' से क्या अभिप्राय है?

.....

.....

.....

.....

.....

6.2 स्वास्थ्य संवर्धन एवं प्रबंधन में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान की संभावनाएं

अब हम स्वास्थ्य की मानवशास्त्रीय धारणा को समझते हैं। अब हमें स्वास्थ्य संवर्धन और प्रबंधन में अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की भूमिका के बारे में अंतर्दृष्टि विकसित करना महत्वपूर्ण है।

6.2.1 चिकित्सा में मानवविज्ञान

चिकित्सा मानवविज्ञान अथवा "वैद्यक–शास्त्र में मानवविज्ञान" अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान में एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है जो स्वास्थ्य संबंधी घटनाओं पर केन्द्रित होता है। अपने सरलतम भाव में, आयुर्विज्ञान मानवविज्ञान, मानवविज्ञानी एवं सामाजिक विज्ञान आधारित ज्ञान, सिद्धांतों एवं विधियों का प्रयोग, मानव समाजों एवं संस्कृतियों की एक शृंखला के संदर्भ में स्वास्थ्य, अस्वस्थता, बीमारी एवं उपचार को समझने के लिए करता है। चिकित्सा मानवविज्ञान मानव स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली, स्वास्थ्य एवं बीमारी तथा जैव–सांस्कृतिक अनुकूलन के सामाजिक–सांस्कृतिक पहलुओं का अध्ययन करता है (मैक एलरोय, 1996)। आयुर्विज्ञान मानवविज्ञानी विभिन्न मानव समाजों द्वारा सूत्रबद्ध की गयी रणनीतियों एवं प्रथाओं पर बीमारी एवं अस्वस्थता के विरुद्ध प्रयास के रूप में केन्द्रित रहते हैं। इस प्रकार लोगों की आस्थाओं एवं बीमारी के हेतु विज्ञान के प्रति उनकी मान्यताओं तथा उनके स्वास्थ्य संबंधी व्यवहार को संचालित करने वाले सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्थानों के बीच सम्बन्धों का मूल्यांकन किया जाता है।

चिकित्सा मानवविज्ञानी स्वास्थ्य, अस्वस्थता एवं उपचार को सामाजिक–सांस्कृतिक, जादुई–धार्मिक एवं राजनैतिक–पारिस्थितिक संरचनाओं के आधार पर देखते एवं व्याख्या करते हैं। वह विश्वभर में नृवंशीय–आयुर्विज्ञानी प्रथाओं का अध्ययन करते हैं। भसीन (2007) द्वारा कहा गया कि आयुर्विज्ञानी मानवविज्ञान "स्वास्थ्य, अस्वस्थता एवं उपचार के एक अंदरूनी एवं बाहरी, दोनों दृष्टिकोणों से मूल्यांकन; प्रकृतिक एवं व्यक्तिगत व्याख्या, बुरी नज़र, जादू–टोना; स्वास्थ्य पारस्थिकी का जैवसांस्कृतिक एवं राजनैतिक अध्ययन; आयुर्विज्ञान के प्रकार; आयुर्विज्ञान एवं स्वास्थ्य सेवा तथा रोगी–चिकित्सक सम्बन्धों की प्रणालियों के विकास; स्वास्थ्य विचारधाराओं एवं सांस्कृतिक रूप से विभिन्न पर्यावरणों में वैकल्पिक आयुर्विज्ञान प्रणालियों के एकीकरण के राजनैतिक आर्थिक अध्ययन" पर लक्षित होता है। चिकित्सा मानवविज्ञानी विविध परिस्थितियों में जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में गाँव, दवाखाने, स्वास्थ्य केंद्र एवं शहरी अस्पतालों में काम करते हैं।

नृवंशीय–वैद्यक–शास्त्र (एथनोमेडिसिन) चिकित्सा मानवविज्ञान क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। यह लोक अथवा प्राचीन वैद्यक–शास्त्र का पर्याय है। यह अपने सरल रूप में ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में व्याप्त स्वदेशी स्वास्थ्य सेवा प्रथाओं की मौखिक परंपरा के रूप में चल रहा है। नृवंशीय–वैद्यक–शास्त्र अस्वस्थता एवं उपचार के सांस्कृतिक संदर्भ से भी संबन्धित है। चिकित्सा मानवविज्ञानी जैव–वैद्यक–शास्त्र एवं नृवंशीय–वैद्यक–शास्त्र में अंतर स्पष्ट करते हैं, जहां पहले वाला "पाश्चात्त्य" आयुर्विज्ञान प्रणाली से संबद्ध है तथा बाद वाला स्वास्थ्य एवं अस्वस्थता से जुड़ी आस्थाओं, रीतियों एवं प्रथाओं की परंपरागत एवं स्वदेशी स्थानीय प्रणाली से संबद्ध है (सिक्किक, 2009)। नृवंशीय–वैद्यक–शास्त्र अध्ययन आयुर्विज्ञान एवं धार्मिक संस्थानों की संगति, परंपरागत स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली की प्रभावशीलता; निदान एवं चिकित्सा विधियाँ, परंपरागत उपचारों का अध्ययन, अस्वस्थता एवं आयुर्विज्ञान बहुलवाद का प्रसार एवं उसके ज्ञान का लेखा–जोखा रखता है (भसीन, 2007)।

मनुष्य विभिन्न पर्यावरणिक व्यवस्थाओं के प्रति अनुकूलन मात्र अनुवंशिकी एवं शारीरिक तंत्र आधार पर ही नहीं करते हैं अपितु सांस्कृतिक ज्ञान एवं सहनशीलता के व्यक्तिगत तंत्र के आधार पर भी करते हैं। आयुर्विज्ञानी मानवविज्ञानी बहुधा स्वास्थ्य संबन्धित घटनाओं को समझने के लिए पर्यावरण के प्रति मानव संबंधी जैविक (अथवा प्ररूपी), सामाजिक–सांस्कृतिक एवं मनोविज्ञानी घटकों के बीच गतिशील परस्पर क्रियाओं पर बल देते हैं। ऐसा करना जैव–सांस्कृतिक चिकित्सा (आयुर्विज्ञान) मानवविज्ञान के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त करता है। यह आयुर्विज्ञान मानवविज्ञान का एक उप–क्षेत्र है, जो इस बात पर बल देता है कि मानव जैव–सांस्कृतिक प्राणी हैं तथा उनके स्वास्थ्य को जैविक एवं सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के द्वारा ही आकार मिलता है। चिकित्सा मानवविज्ञान में आलोचनात्मक जैव–सांस्कृतिक दृष्टिकोणों ने लोक स्वास्थ्य निगरानी क्षेत्र में सामाजिक महामारी–विज्ञान के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त किया है।

चिकित्सा मानवविज्ञान अंतर्विषयक शोधकार्य पर बल देता है। इसका प्रारम्भ मानव जीवविज्ञानियों, नृवंशविज्ञानियों, तथा भाषाविदों के बीच सहयोगी शोध प्रयासों के रूप में हुआ; अंततः मानवविज्ञानी शोधकार्य की संधि समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, चिकित्सकीय विज्ञान, लोक स्वास्थ्य एवं उपचर्या के साथ हो गयी थी (मैकएलरोय, 1996)। आयुर्विज्ञान मानव विज्ञानियों का शोध क्षेत्र मात्र महामारी–विज्ञान, मानव क्रम–विकास एवं शरीर–रचना विज्ञान, स्वास्थ्य एवं बीमारी के वर्णन, मानसिक स्वास्थ्य एवं लोक स्वास्थ्य तक ही सीमित नहीं है अपितु रोगी–उपचारक संबंध, बालचिकित्सक, नशाखोरी, चिकित्सकीय कर्मचारियों एवं चिकित्सकीय अफसरशाहों के प्रशिक्षण एवं कार्य पद्धति तथा परंपरागत आयुर्विज्ञान के साथ जैव–आयुर्विज्ञान का एकीकरण करना भी शामिल होता है (गारटोला, 2008 एंड फ्रेडसन, 1976)।

अपनी प्रगति जांचें

5. एथनोमेडिसिन की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

6. चिकित्सा मानवविज्ञान का अनुसंधान क्षेत्र क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

6.2.2 सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रबंधन

लोक स्वास्थ्य का सीधा सा लक्ष्य होता है, व्यक्तिगत, सामुदायिक तथा सामाजिक स्तर पर किए जाने वाले सुनियोजित एवं व्यवस्थित प्रयासों द्वारा स्वास्थ्य संवर्धन एवं उपचार करना एवं बीमारी से संरक्षण करना। विंसलो (1920) ने लोक स्वास्थ्य को "बीमारी से संरक्षण, जीवन को दीर्घकालिक बनाने एवं व्यवस्थित प्रयासों एवं सूचित चुनावों द्वारा समाज, संस्थाओं, सार्वजनिक एवं निजी, समुदायों एवं व्यक्तियों के स्वास्थ्य संवर्धन करने के विज्ञान एवं कला" के रूप में परिभाषित किया है। सामुदायिक सहभागिता लोक स्वास्थ्य क्षेत्र का एक अत्यावश्यक अंग है चूंकि यह स्वास्थ्य का संवर्धन तथा ठोस एवं व्यवस्थित प्रयासों द्वारा स्वास्थ्य संरक्षण करता है।

लोक स्वास्थ्य या सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं मानवविज्ञान, दोनों ही प्राथमिक रूप से समुदाय आधारित शोध पर केन्द्रित होते हैं जहां पर पहले वाला सामुदायिक स्वास्थ्य को सशक्त एवं प्रोत्साहित करने तथा जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए उपयुक्त हस्तक्षेप रणनीतियाँ विकसित करता है और दूसरा वाला समुदाय अथवा लोगों के समूह के सामाजिक–सांस्कृतिक संस्थानों का अंकलन करता है। व्यावहारिक मानव विज्ञानियों का लोक स्वास्थ्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यह योगदान मात्र पद्धति–आधारित शोधन तथा आंकड़ों की विवेचना करने तक सीमित नहीं हैं, अपितु इनका विस्तार उपयुक्त हस्तक्षेप रणनीतियाँ विकसित करने एवं लोक स्वास्थ्य क्षेत्र में प्रभावशाली नीतियाँ निर्मित करने तक होता है।

व्यवस्थित आंकड़ों का संग्रहण करने के लिए नृवंशविज्ञान का, वर्णनात्मक एवं रचनात्मक आंकड़ों के संग्रहण के लिए गुणात्मक एवं मात्रात्मक विधियों (उदाहरण के लिए शारीरिक, नृमितिक एवं सीरम वैज्ञानिक परीक्षण के साथ–साथ समूहिक चर्चा, गहन साक्षात्कार, एवं सहभागी अवलोकन) का उपयोग पद्धति–आधारित शोधन में सहायता प्रदान करते हैं तथा स्वास्थ्य आंकड़ों से संबन्धित परिणामों की अधिक ठोस विवेचना प्रदान करते हैं।

आयुर्विज्ञान–पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य मानवविज्ञान की जैव–आयुर्विज्ञान से लेकर जैव–सांस्कृतिक पहलू तक मिलता है। यह स्वास्थ्य संबन्धित घटनाओं की अनुकूलक, गतिशील एवं जनसंख्या–आधारित प्रक्रियाओं के रूप में व्यापक समझ प्रदान करता है। आयुर्विज्ञान मानवविज्ञान लोक स्वास्थ्य प्रबंधन एवं संवर्धन में एक अत्यावश्यक भूमिका निभाता है। यह बीमारी के जैविक एवं सांस्कृतिक संदर्भ के बीच संबंध का, मानव क्रम–विकास पर बीमारी के प्रभाव का, विभिन्न आनुवांशिक प्रारूपों के संदर्भ में रोग की संवेदनशीलता के लिए प्रतिरोध का आंकलन करता है तथा परंपरागत समुदायों अथवा समाजों के साथ आधुनिक आयुर्विज्ञान स्वास्थ्य देखभाल प्रथाओं को जोड़ने के तरीके बताता है। इसके अतिरिक्त व्यावहारिक मानवविज्ञानी लोक स्वास्थ्य संगठनों के

वर्तमान लोक स्वास्थ्य कार्यक्रमों एवं गतिविधियों की प्रभावशीलता की जांच–पड़ताल करने में भी अत्यावश्यक भूमिका निभाते हैं।

अपनी प्रगति जांचें

7. 'लोक स्वास्थ्य' या सार्वजनिक स्वास्थ्य का क्या अर्थ है?

.....

.....

.....

.....

.....

8. सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में चिकित्सा मानवविज्ञानी की भूमिका का वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

6.2.3 महामारी–विज्ञान

अब हम जानते हैं कि मानवविज्ञानी उपक्षेत्र 'लोक स्वास्थ्य' या सार्वजनिक स्वास्थ्य में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। परंतु क्या मानवविज्ञान मानवजाति की रोग संवेदनशीलता एवं आनुवांशिक चरित्र को समझने में एक अत्यावश्यक भूमिका निभाता है? हाँ; चूंकि महामारी विज्ञान एवं मानव आनुवंशिकी क्षेत्र में इसकी उपयोगिता है।

महामारी विज्ञान आंकड़ों द्वारा संचालित विधियों का उपयोग करते हुए एक विशिष्ट आबादी में स्वास्थ्य संबंधी घटनाओं का एक वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अध्ययन है। ओल्सेन एट एल (2000) ने व्यापकता के साथ महामारी विज्ञान को "विशिष्ट अबादियों में स्वास्थ्य संबन्धित अवस्थाओं अथवा घटनाओं के आवंटन एवं निर्धारकों के अध्ययन तथा स्वास्थ्य समस्याओं के नियंत्रण करने के लिए इस अध्ययन की उपयोगिता" के रूप में परिभाषित किया है।

पिछले 30 वर्षों में, व्यावहारिक आयुर्विज्ञान मानवविज्ञान लोक स्वास्थ्य क्षेत्र में एक अधिक मौलिक विषय के रूप में विकसित हुआ है। हालांकि महामारी विज्ञान एवं आयुर्विज्ञान मानवविज्ञान दोनों का प्रारम्भ एक समान उद्देश्य अवलोकन आधारित तकनीकों का उपयोग करते हुए मानव आबादी के स्वास्थ्य का वर्णन करने के साथ हुआ परंतु पिछले कुछ वर्षों में महामारी विज्ञान और मनव विज्ञान के बीच अंतर–विषयक सहयोगिता पर बहुत चर्चाएं हुईं (ट्रोसल, 2005)। इसने रूढ़िवादी एवं बेकार के विरोधाभासों के साथ साथ– दो विषयों के बीच वियोजक– अनुगमनक, मात्रात्मक–गुणात्मक; विशिष्ट–सामान्यीकृत; प्रकृतिक–कृत्रिम कारकों को भी जन्म दिया।

महामारी वैज्ञानिक, महामारी विज्ञान आधारित शोध की विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक सीमाओं से परिचित हैं (ब्लॅक, 2001)। उत्कृष्ट महामारी वैज्ञानिक 'क्यों और कैसे' कोई

रोग विशेष किसी भौगोलिक क्षेत्र में होता है, पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। परंतु यह जानना भी महत्त्वपूर्ण है कि 'क्यों और कैसे' उपरयुक्त रोग विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में प्रकट होने एवं अस्तित्त्व में आने में विफल होता है, जबकि वहाँ पर उस रोग के फैलने के लिए पर्याप्त संभावनाएं उपलब्ध होती हैं। उपर्युक्त संदर्भ में, नृवंशीय जानकारी महमारीविज्ञान आधारित परिणामों के विवेचनात्मक संवर्धन में एक अत्यावश्यक भूमिका निभा सकती है। नृवंशीय आंकड़े स्वास्थ्य से संबन्धित किसी विशेष घटना के सांस्कृतिक संदर्भ पर प्रकाश डाल सकते हैं तथा इस प्रकार से घटना के बारे में व्यापक एवं अधिक ठोस समझ प्रदान करते हैं।

धर्म, नातेदारी, जीवन निर्वाह एवं वैवाहिक स्वरूप के अतिरिक्त नृवंशीय आंकड़ों में किसी समुदाय के स्वास्थ्य, अस्वस्थता एवं बीमारी तथा परंपरागत स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली के अंदरूनी परिप्रेक्ष्य भी शामिल होते हैं। यह एक महामारी वैज्ञानिक को किसी स्वास्थ्य संबंधी घटना का विवेचनात्मक संवर्धन करने में सहायता ही नहीं करेगा अपितु महामारी विज्ञान आधारित सर्वेक्षण (सामाजिक रूप से अनुकूल प्रश्नावली प्रारूप) (बीहाग एवं अन्य 2008) करने में स्वीकार्यता को सुधार करेगा, इस प्रकार लोक स्वास्थ्य निगरानी एवं नीति विकास को सशक्त करेगा।

ऐसा होने से महामारीविज्ञान आधारित तथा मानवविज्ञान आधारित संधि को एक मंच मिल गया, जिसके परिणामस्वरूप महामारी विज्ञान आधारित मानवविज्ञान का विकास हुआ। महामारी विज्ञान आधारित मानवविज्ञान विभिन्न समुदायों अथवा समाजों में बीमारी के फैलाव एवं निर्धारकों पर ही केन्द्रित नहीं रहता अपितु सांस्कृतिक एवं जैविक मानदंडों को भी चित्रित करता है, जो किसी बीमारी को किसी आबादी में प्रकट होने से रोकते हैं अथवा सहायक होते हैं।

अपनी प्रगति जांचें

9. महामारी विज्ञान आधारित मानवविज्ञान को परिभाषित करें।

.....

.....

.....

.....

.....

6.2.4 आणविक आनुवंशिकी

आणवीक मानवविज्ञान तथा मानवविज्ञान आधारित आनुवंशिकी, आणविक आनुवांशिक शोध क्षेत्र में रहते हुए, मानवविज्ञान के दो महत्त्वपूर्ण शोध क्षेत्र हैं। "आणविक मानवविज्ञान" की संज्ञा सर्वप्रथम जीवविज्ञानी, एमिल जुकरकंदल ने, प्रोटीन एवं पोलीन्यूक्लियोटाइड्स में पायी जाने वाली आनुवांशिक जानकारी के विश्लेषण के माध्यम से मनुष्य–सदृश जानवरों के जातिवृत्त एवं मानव क्रम–विकास की व्याख्या करने के लिए उपयोग की थी (सोमर, 2008)। मानव एवं गैर–मानव जातिवृत्तीय सम्बन्धों, रूपांतर एवं आवासन प्रक्रिया, जीन–पर्यावरण परस्परता एवं साधारण एवं जटिल बीमारियों के प्रति आनुवांशिक पूर्वानुकूलता के पहलुओं से संबन्धित मानव

विज्ञानियों द्वारा उठाए गए प्रश्नो के उत्तर के रूप में आणविक मानवविज्ञान, आणविक आनुवंशिकी विधियों एवं तकनीकों का उपयोग करता है।

यह मानव आबादी संरचना, इतिहासों एवं क्रम–विकास के पुनर्निर्माण को लक्ष्य बनाकर डीएनए विश्लेषण का उपयोग करते हुए मानव आनुवांशिक बहुरूपता पर केन्द्रित रहता है (मस्ताना, 2007)। आनुवांशिक बहुरूपता की जांच पड़ताल हमें यह समझने में सहायता कर सकती है कि किस प्रकार भूतकालीन जनसांख्यिकीय घटनाओं एवं चुनाव प्रक्रिया ने मानव जीन संबंधी संरचना में विभिन्नता पैदा की। न्यायालयिक विज्ञान विकासवादी जीवविज्ञान एवं रोग विश्लेषण के क्षेत्र में आणविक मानवविज्ञान की अत्यधिक महत्त्वपूर्ण उपयोगिता है।

मानवविज्ञान आधारित आनुवंशिकी, आनुवंशिकी की संकल्पनाओं, ज्ञान एवं विधियों को मानव विकास के क्रम, मानव प्रवास एवं अफ्रीका से बाहर फैलाव, मानव विभिन्नता एवं जटिल बीमारियों के प्रति जैव–सांस्कृतिक योगदान से संबन्धित मानवशास्त्रीय जांच पड़ताल को संबोधित करने के लिए प्रयुक्त होती है (क्रोफोर्ड, 2007)। आइए, यहाँ पर मानवशास्त्रीय आनुवंशिकी एवं मानव आनुवंशिकी में अंतर जान लेते हैं। तालिका 1. इन दोनों विषयक्षेत्रों के बीच वैचारिक अंतर का वर्णन करती है।

तालिका 1. मानवशास्त्रीय आनुवंशिकी एवं मानव अनुवंशिकीः वैचारिक अंतर

क्र स.	मानवशास्त्रीय आनुवंशिकी	मानव आनुवंशिकी
1	आनुवंशिकी / पर्यावरणिक परस्परता के बारे में व्यापक जैव–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य	तंत्र एवं प्रक्रियाएं– बीमारी में विशेष रूप से
2	आबादी पर केन्द्रित, पारिवारिक साम्यता के परिमापन के लिए वंशावलियों का उपयोग	प्रोबेण्ड के परिवार, जुड़वा एवं प्रतरूप परिवार
3	प्रजनन आधार पर छोटी पृथक आबादी–अधिकांश रूप से गैर–पाश्चात्य	बड़े, शहरी एवं नैदानिक नमूने
4	सांस्कृतिक रूप से सदृश अबादियाँ	आबादियाँ, वंश, सामाजिक–आर्थिक कारकों, व्यवसाय एवं जीवनशैली के आधार पर विषम हो सकती हैं
5	आबादी में सामान्य विभिन्नता का नमूना	प्रतिनिधि नैदानिक अन्वेषन के आधार पर नमूना लेना
6	पर्यावरण का चरित्र चित्रण एवं परिमापन करने के प्रयास किए जाते हैं	पर्यावरणिक विभिन्नता मूल्यांकन विरले ही किया जाता है। ऐसा माना जाता हैः $e^2 = 1-h^2$
7	जटिल लक्षणों में सामान्य विभिन्नता का अध्ययन	बीमारी बनाम सामान्यता का विरोधाभास– प्रायः देखा जाता है

स्रोतः सी. एफ.: क्रोफोर्ड, 2000

ऊपर दी गयी तालिका यह दर्शाती है कि मानवशास्त्रीय आनुवंशिकी एवं मानव आनुवंशिकी में अंतर इस तथ्य पर आधारित है कि पहले वाला तुलनात्मक रूप से छोटे, प्रजनन आधार पर पृथक, गैर–पाश्चात्य आबादियों पर बल देता है, जबकि बाद वाला बड़े शहरी नैदानिक नमूनों पर केन्द्रित है। पहले वाला मात्रात्मक समलक्षणियों के सह–रूपांतरों का उपयोग करते हुए पर्यावरणिक प्रभावों को मापने का प्रयास भी करता है, जबकि बाद वाला पर्यावरणिक प्रभाव को मापने पर तुलनात्मक रूप से कम बल देता है ताकि पर्यावरणिक–आनुवांशिक परस्परताओं के प्रभाव की जांच पड़ताल हो सके (क्रोफोर्ड, 2007)। अतः मानवविज्ञानी, आनुवंशिकी मानव क्रम–विकास एवं हेतुविज्ञान तथा जटिल बीमारियों के फैलने के प्रति जैव–सांस्कृतिक दृष्टिकोण अपनाती है।

अपनी प्रगति जांचें

10. मानवशास्त्रीय आनुवंशिकी मानव आनुवंशिकी से किस प्रकार भिन्न है?

.....

.....

.....

.....

.....

6.3 भारतीय परिदृश्य

हम अब जानते हैं कि अनुप्रयुक्त (व्यावहारिक) मानवविज्ञान ने स्वास्थ्य प्रबंधन एवं संवर्धन में अति–महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। भारत में अनेकों शोधकार्यों का संचालन स्वास्थ्य अनुसंधान क्षेत्र में व्यावहारिक मानवविज्ञान के उपयोग पर प्रकाश डालने के लिए किया जाता रहा है।

भारत में, आदिवासी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे लोग अस्वस्थता को प्रकृतिक एवं अलौकिक कारणों से जोड़कर देखते हैं। अस्वस्थता के अलौकिक कारणों में शामिल हैं दुष्ट–आत्मा का आक्रमण, बुरी–नज़र लग जाना, देवी–देवताओं का प्रकोप एवं किसी अनुष्ठान को न कर पाना तथा पिछले जन्म में किए गए बुरे काम (कपूर, 2006, भसीन, 2007)। ऐसा विचार प्रस्तुत किया गया है कि, आदिवासी लोग मुख्य रूप से चार आत्माओं में असीम आस्था रखते हैं: रक्षात्मक आत्माएँ: सामुदायिक स्तर पर जिनकी पूजा की जाती है तथा जो ग्रामीण कल्याण से जुड़ी हैं; दयालु आत्माएँ: जो पारिवारिक एवं सामुदायिक स्तर पर पूजी जाती हैं; पैतृक आत्माएँ: बहुत ही दयालु आत्माएँ जो परिवार के सदस्यों की रक्षा करती हैं तथा अपकारी (अथवा दुष्ट) आत्माएँ: जो चेचक, गर्भपात, बुखार इत्यादि जैसी बीमारियों को नियंत्रित करती हैं(साहू एवं मुखर्जी, 2008)। भसीन (2007) ने लिखा है कि राजस्थान में (उत्तर भारत में) चेचक बीमारियों को तीन दैवीय माताओं अथवा देवियों से जोड़कर देखा जाता है– चिकन पोक्स (छोटी माता); स्माल पोक्स (बड़ी माता) एवं मीज़ल्स (खसरा)।

पाँच मुख्य प्रकार के रोग–उपचार की विधियाँ मौजूद हैं–मात्र परंपरागत आयुर्विज्ञान; मात्र आध्यात्मिक उपचार; आध्यात्मिक उपचार के साथ परंपरागत आयुर्विज्ञान; वैकल्पिक आयुर्विज्ञान के अन्य प्रकार तथा जैव–आयुर्विज्ञान (भसीन, 2007)। प्रत्येक

आदिवासी समाज का अपना परंपरागत उपचारकों का संयोजन होता है। यह परंपरागत उपचारक व्याधि एवं बीमारियों को ठीक करने के लिए स्वदेशी स्वास्थ्य देखभाल रणनीतियों, जड़ी–बूटी आयुर्विज्ञान, एवं धार्मिक–जादुई दृष्टिकोण का उपयोग करते हैं। इन परंपरागत उपचारकों के पास रोग हेतु विज्ञन एवं उपचार का मूल वैज्ञानिक ज्ञान नहीं होता है तथा प्राथमिक रूप से यह स्वास्थ्य एवं अस्वस्थता के सामाजिक– सांस्कृतिक संदर्भ पर ही केन्द्रित रहते हैं।

आदिवासी एवं ग्रामीण समुदाय, आज भी, जैव–आयुर्विज्ञान प्रणाली की तुलना में परंपरागत स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली पर ही अधिक बल देते हैं। परंतु यह बताना महत्त्वपूर्ण होगा कि भारतीय आयुर्विज्ञान नीति व्यापक दृष्टि से बहुलवादी है। यह संपूर्णतः, मात्र परंपरागत आयुर्विज्ञान पर निर्भर नहीं करती तथा साथ ही जैव–आयुर्विज्ञान के फ़ायदों का भी उपयोग करती है।

6.4 सारांश

हमने अब स्वास्थ्य शोध क्षेत्रों में अनुप्रयुक्त (व्यावहारिक) मानवविज्ञान की भूमिका के बारे में एक समझ विकसित कर ली है। स्वास्थ्य की संकल्पना बहुमुखी है। यह शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य को अपने में समाहित करती है। अनुप्रयुक्त (व्यावहारिक) मानवविज्ञानी स्वास्थ्य की व्यापक समझ पर बल देते हैं। वह शोध प्रारूपों, आंकड़े एकत्रित करने की विधियों, एवं हस्तक्षेप रणनीतियों की प्रभावशीलता को सुनिश्चित करने में पारंगत होते हैं तथा यह सुनिश्चित करते हैं कि इन्हे किसी विशिष्ट समुदायाओं अथवा आबादी समूहों की आवश्यकताओं के अनुकूल होने के लिए सांस्कृतिक ढंग से संशोधित किया गया है।

उनकी स्वास्थ्य संबंधी प्रक्रियाओं को संबोधित करने और चिकित्सा मानवविज्ञान, महामारी विज्ञान आधारित, एवं आणविक आनुवंशिकी पहलुओं की दृष्टि से स्वास्थ्य, बीमारी एवं अस्वस्थता का आंकलन करने में एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वह स्वास्थ्य, बीमारी एवं अस्वस्थता का विभिन्न गुणों के आधार पर अंकलन एवं अन्वेषन करते हैं जिसकी श्रृंखला परंपरागत स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली, स्वदेशी स्वास्थ्य देखभाल प्रथा, स्वास्थ्य संबन्धित घटनाओं की अंदरूनी एवं बाहरी समझ, स्वास्थ्य एवं बीमारी के जैव–सांस्कृतिक एवं आनुवांशिक पहलुओं के प्रति रोगी–उपचारक गतिशीलता, मानव क्रम–विकास पर बीमारी का प्रभाव एवं विभिन्न आनुवांशिक ढांचों के संदर्भ में बीमारी संवेशनशीलता के प्रति जैव–सांस्कृतिक प्रतिरोध तक फैली हुई है।

अनुप्रयुक्त (व्यावहारिक) मानवविज्ञान के सहभागी एवं बहुविषयी शोधकार्य अन्य विषयों जैसे महामारी विज्ञान, लोक स्वास्थ्य एवं सामाजिक विज्ञानों के साथ मिलकर स्वास्थ्य विज्ञानों के क्षेत्र में मानवविज्ञानी शोधकार्य को अधिक सहायता, विश्वसनीयता एवं पहचान दिलवा सकते हैं। इसके साथ ही इस प्रकार के सहयोग से उन कार्यप्रणाली आधारित सीमाओं का समाधान भी मिलेगा जिनका सामना उन उत्कृष्ट स्वास्थ्य विषयक्षेत्रों द्वारा किया जाता है जिनके साथ व्यावहारिक मानवविज्ञान सहभागी बनता है। इसलिए अनुप्रयुक्त (व्यावहारिक) मानव विज्ञानियों को मानवशास्त्रीय विषयक्षेत्र, संवर्धित सहभागी शोध प्रयासों, एवं निकट भविष्य में उन्नत सामुदायिक भागीदारी में अधिक स्वीकार्यता मिलनी चाहिए।

6.5 संदर्भ

Antonovsky, A. (1979). *Health, stress and coping*.Jossey-Bass.

Antonovsky, A. (1984). *The sense of coherence as a determinant of health*. In: Matarazzo J, ed. *Behavioural health: A handbook of health enhancement and disease prevention*. John Wiley, pp.114–29.

Béhague, D. P., Gonçalves, H., & Victora, C. G. (2008). "Anthropology and epidemiology: learning epistemological lessons through a collaborative venture". *Ciencia & saude coletiva*, Vol. *13*, No. 6, pp. 1701-1710.

Bhasin, V. (2007). "Medical anthropology: a review". *Studies on Ethno-medicine*, Vol.1, No. 1, pp. 1-20.

Black, N. (2001). "Evidence based policy: proceed with care". *BMJ*; Vol. 323, No. 4, pp. 275–279.

Blazer, D. G., & Hernandez, L. M. (Eds.). (2006). *Genes, behavior, and the social environment: Moving beyond the nature/nurture debate*. National Academies Press.

Brüssow, H. (2013). "What is health?". *Microbial biotechnology*, Vol. *6*, No. 4, pp. 341-348.

Crawford, M. H. (2000). "Anthropological Genetics in the Twenty-First Century: Introduction". *Human Biology,* Vol. 72, pp. 3–13.

Crawford, M. H. (2007). *Anthropological Genetics: Theory, Methods and Applications*. Cambridge University Press: Cambridge.

Freidson, E. (1976). *Professional dominance: The social structure of medical care*. Atherton Press: New York

Gartaulla, R. P. (2008). *Text Book of Medical Sociology and Medical Anthropology*; Research Centre for Integrated Development, Nepal (RECID/Nepal), Kathmandu, Nepal

Grønseth, A. (2009). *Three approaches to the study of health, disease and illness; the strengths and weaknesses of each, with special reference to refugee populations*. Oslo University Sykehus: Oslo

Hill, C. E. (ed). (1985). *Training Manual in Medical Anthropology*. American Anthropological Association: Washington D. C

Kapoor, A. K. (2006). "Ecology, Disease Patterns and Indigenous Healing Aspects in Himalayan Communities". In: A. N. Sharma, R. K. Gautam and A. K. Gharami (eds.), *Indigenous Health Care and Ethno-Medicine,* pp. 1-12. Sarup & Sons: New Delhi.

Khongsdier, R. (2007). "Bio-cultural Approach: The essence of anthropological study in the 21st Century". *Anthropology Today: Trends, Scope and Applications. American Anthropologist Special Volume*, *3*, 39-50.

Langdon, E. J., & Wiik, F. B. (2010). "Anthropology, health and illness: an introduction to the concept of culture applied to the health sciences". *Revista latino-americana de enfermagem*, Vol. *18*, No. 3, pp. 459-466.

Mastana, S. (2007). "Molecular anthropology: population and forensic genetic applications". *Anthropologist Special*, Vol. *3*, pp. 373-383.

McElroy, A. (1990). "Biocultural models in studies of human health and adaptation." *Medical Anthropology Quarterly,* Vol. 4, No. 3, pp. 243-265.

McElroy, A. (1996). *Medical Anthropology*. In: D. Levinson, M. Ember (Hrsg.), Encyclopedia of Cultural Anthropology. Henry Holt: New York

Meera, S. M. (2007). *Status of health care among the slum dwellers of Mysore city: an Anthropological study*. Doctoral thesis.University of Mysore, Karnataka. Retrieved from: http://hdl.handle.net/10603/91075

Olsen, S. J., MacKinon, L. C., Goulding, J. S., Bean, N. H. and Slutsker, L. (2000)."Surveillance for foodborne disease outbreaks — United States, 1993-1997". In: *Surveillance Summaries, March 27, 2000*. MMWR 2000; 49(No. SS-1):1–59.

Regmi, R. R. (2001). "Anthropological insights in the delivery of health services in Nepal". *Occasional Papers in Sociology and Anthropology*, Vol. *7*, pp. 1-13.

Sahu, D. K. & B. M. Mukherjee. (2008). "Cultural Aspects of Health and Illness: The Tribal Chhattisgarh". In: R. K. Pathak (ed.)*, Bio-Social Issues in Health. pp. 200-204.* North Book Centre: New Delhi.

Schulkin J. (2004). *Allostasis, homeostasis, and the costs of physiological adaptation*. Cambridge University Press: Cambridge

Sikkink, L. (2009). *Medical Anthropology in Applied Perspective*. Cengage Learning: Wadsworth, USA

Sommer, M. (2008). "History in the gene: negotiations between molecular and organismal anthropology". *Journal of the History of Biology*, Vol. *41,* No. 3, pp.473-528.

Trostle, J. A. (2005). *Epidemiology and Culture*. Cambridge University Press: Cambridge

Winslow, C. E. A. (1920).*"The Untilled Fields of Public Health".Science,* Vol.51 (1306), pp. 23–33.

World Health Organization (WHO).(2006). Constitution of the World Health Organization. Retrieved from:
https://www.who.int/governance/eb/who_constitution_en.pdf

6.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

1. व्यावहारिक मानवविज्ञानी मानवशास्त्रीय विधियों एवं तकनीकों का उपयोग ख़तरे में पड़े समूहों की उत्तरजीविता एवं स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने एवं उनके स्वास्थ्य संबन्धित मुद्दों को समझने के लिए करते हैं। वह स्वास्थ्य की 'सम्पूर्ण–समावेशी' समझ पर बल देते हैं तथा स्वास्थ्य व्यवहार एवं अस्वस्थता से संबन्धित मनोदृष्टियों, आस्थाओं एवं धारणाओं तथा सामाजिक विभक्तिकरण एवं स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के बीच सम्बन्धों को समझने का प्रयास करते हैं।

2. शारीरिक स्वास्थ्य की संकल्पना 'स्थिरता प्राप्त करने' से संबद्ध है। वहीं दूसरी ओर सामाजिक स्वास्थ्य में लोगों की अपनी क्षमताओं एवं कर्तव्यों को पूरा करने की, अपने जीवन का संचालन करने की एवं काम के साथ साथ सामाजिक गतिविधियों में सम्मिलित होने की क्षमता अंतर्निहित है। बॉक्स 1 को देखें।

3. जैव–सांस्कृतिक दृष्टिकोण के अंतर्गत, किसी व्यक्ति विशेष अथवा आबादी विशेष के स्वास्थ्य का आंकलन पर्यावरण से जुड़े जैविक तथा सांस्कृतिक घटकों के बीच परस्परता के परिणामों के आधार पर किया जाता है।

4. प्रत्येक संस्कृति, अपनी जटिलता के स्तर के बावजूद, स्वास्थ्य की देखभाल एवं स्वास्थ्य की मांग करने वाले व्यवहार के बारे में स्वयं की एक समझ एवं आस्थाएं रखती है। इसे बहुधा "स्वास्थ्य संस्कृति" की संज्ञा दी जाती है।

5. नृवंशीय–वैद्यक–शास्त्र (ऐथनोमेडिसिन) चिकित्सा मानवविज्ञान क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। यह लोक अथवा प्राचीन वैद्यक–शास्त्र का पर्याय है। यह अपने सरल रूप में ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में व्याप्त स्वदेशी स्वास्थ्य सेवा प्रथाओं की मौखिक परंपरा के रूप में चल रहा है। नृवंशीय–वैद्यक–शास्त्र अस्वस्थता एवं उपचार के सांस्कृतिक संदर्भ से भी संबन्धित है। अनुभाग 6.2.1 को देखें।

6. आयुर्विज्ञान मानव विज्ञानियों के शोध क्षेत्र में स्वदेशी स्वास्थ्य संस्कृति, मानव क्रम–विकास एवं शरीर–विज्ञान, स्वास्थ्य एवं रोग का चरित्र–चित्रण, महामारी विज्ञान, मानसिक स्वास्थ्य एवं लोक स्वास्थ्य, रोगी–उपचारक संबंध एवं जैवआयुर्विज्ञान के साथ परंपरागत आयुर्विज्ञान का एकीकरण शामिल हैं।

7. लोक स्वास्थ्य का सीधा सा लक्ष्य होता है, व्यक्तिगत, सामुदायिक तथा सामाजिक स्तर पर किए जाने वाले सुनियोजित एवं व्यवस्थित प्रयासों द्वारा स्वास्थ्य संवर्धन एवं उपचार करना एवं बीमारी से संरक्षण करना। सामुदायिक सहभागिता लोक स्वास्थ्य क्षेत्र का एक अत्यावश्यक अंग है चूंकि यह स्वास्थ्य का संवर्धन तथा ठोस एवं व्यवस्थित प्रयासों द्वारा स्वास्थ्य संरक्षण करता है। भाग 6.2.2 देखें।

8. आयुर्विज्ञान मानवविज्ञान लोक स्वास्थ्य प्रबंधन एवं संवर्धन में एक अत्यावश्यक भूमिका निभाता है। यह बीमारी के जैविक एवं सांस्कृतिक संदर्भ के बीच संबंध

का, मानव क्रम–विकास पर बीमारी के प्रभाव का, विभिन्न आनुवांशिक प्रारूपों के संदर्भ में रोग की संवेदनशीलता के लिए प्रतिरोध का आंकलन करता है तथा परंपरागत समुदायों अथवा समाजों के साथ आधुनिक आयुर्विज्ञान स्वास्थ्य देखभाल प्रथाओं को जोड़ने के तरीके बताता है। इसके अतिरिक्त व्यावहारिक मानवविज्ञानी लोक स्वास्थ्य संगठनों के वर्तमान लोक स्वास्थ्य कार्यक्रमों एवं गतिविधियों की प्रभावशीलता की जांच–पड़ताल करने में भी अत्यावश्यक भूमिका निभाते हैं।

9. महामारी विज्ञान आधारित मानवविज्ञान विभिन्न समुदायों अथवा समाजों में बीमारी के फैलाव एवं निर्धारकों पर ही केन्द्रित नहीं रहता अपितु सांस्कृतिक एवं जैविक मानदंडों को भी चित्रित करता है, जो किसी बीमारी को किसी आबादी में प्रकट होने से रोकते हैं अथवा सहायक होते हैं।

10. मानवशास्त्रीय आनुवंशिकी एवं मानव आनुवंशिकी में अंतर इस तथ्य पर आधारित है कि पहले वाला तुलनात्मक रूप से छोटे, प्रजनन आधार पर पृथक, गैर–पाश्चात्य आबादियों पर बल देता है, जबकि बाद वाला बड़े शहरी नैदानिक नमूनों पर केन्द्रित है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान एवं शरीर का मूल्यांकन*

इकाई की रूपरेखा

7.0 परिचय

7.1 मानवमिति एवं डिज़ाइन मानवमिति (एंथ्रोपोमेट्री)

7.2 डिज़ाइनिंग में मानवमिति के उपयोग

7.2.1 कार्यस्थल डिज़ाइन

7.2.2 परिधान डिज़ाइनिंग

7.2.3 पादुका (शू) डिजाइनिंग

7.3 शरीर–क्रियात्मक मानवविज्ञान

7.3.1 सूचक शब्दों (की वर्ड्स)की व्याख्या

7.4 किनांथ्रोपोमेट्री और इसके उपयोग

7.5 सारांश

7.6 संदर्भ

7.7 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

अधिगम के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी सक्षम होंगे:

- मानवमिति की संकल्पना एवं डिज़ाइन मानवमिति को परिभाषित करने में;
- डिज़ाइनिंग के विभिन्न क्षेत्रों में मानवमिति के उपयोगों का वर्णन करने में;
- शरीर–क्रियात्मक मानवविज्ञान की पहचान करने में; तथा
- किनांथ्रोपोमेट्री एवं इसके उपयोगों की व्याख्या करने में।

7.0 परिचय

इससे पहले कि डिज़ाइन मानवमिति एवं डिज़ाइनिंग में मानवमितिक परिमापनों के उपयोगों के बारे में विस्तार से चर्चा करें, सबसे पहले, आपको मानवमिति के बारे में मौलिक जानकारी ग्रहण करनी होगी। हमने यह पहले ही जान लिया है कि मानव विज्ञान मानवजाति का एक व्यापक अध्ययन है तथा मानवमिति इस व्यापक विषयक्षेत्र की एक छोटी सी इकाई है। हालांकि, मानवमिति हमारे दिन प्रतिदिन के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शारीरिक मानवविज्ञान एवं किनांथ्रोपोमेट्री भी शारीरिक मानव विज्ञान की ही उप–शाखाएँ हैं जो मानव जाति के दिन प्रतिदिन

*योगदानकर्ता: डॉ. मीनल ढल्ल, मानवविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

जीवन में एक अत्यावश्यक भूमिका निभाती हैं। आइये संक्षेप में इन सभी उप–शाखाओं के बारे में एक एक करके इस इकाई के माध्यम से चर्चा करते हैं।

7.1 मानवमिति एवं डिज़ाइन मानवमिति

मानवमिति मानव शरीर के परिमापन का अध्ययन है। यह जीवित मानवों एवं कंकालों का विभिन्न रूप से परिमापन एवं अवलोकन करने की वैज्ञानिक विधियाँ एवं तकनीक उपलब्ध करवाता है (सिंह– भसीन, 1968)। मानवमिति, शारीरिक मानवविज्ञान की विशेषताओं एवं इसकी पारंपरिक विधियों का प्रतिनिधीत्व करती है। वर्तमान संदर्भ में, शारीरिक मानवविज्ञानी धीरे–धीरे मानव जाति के तात्कालिक भौतिक वातावरण के आयामों, अनुपातों एवं आकार के प्रति अधिक चिंताशील हो रहे हैं। इस चिंता ने, सैन्य बलों में उपयोग होने वाले विभिन्न उपकरणों के मानक आकार तैयार करने के साथ–साथ औद्योगिक वस्तुओं के उत्पादन में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिये हैं। फर्नीचर, विमान, कॉकपिट, परिधान, अंतरिक्षयान, इत्यादि की डिज़ाइन तैयार करने के लिए, डिज़ाइनिंग में मानवमिति के ज्ञान का उपयोग करते हुए विभिन्न मानव शरीर आकारों को परिपूर्ण करने के लिए भी एक प्रयास किया गया है। इसे डिज़ाइन मानवमिति के नाम से भी संदर्भित किया जा सकता है।

7.2 डिज़ाइनिंग में मानवमिति के उपयोग

आइये डिज़ाइनिंग के विभिन्न क्षेत्रों में मानवमिति के उपयोगों के बारे में चर्चा करते हैं।

डिज़ाइन मुख्यतः मानव आकर्षण एवं सुगमता के लिए है, इसलिए डिज़ाइनरों को इस बात का विशेष ध्यान रखना पड़ता है कि वह जिन उत्पादों को डिज़ाइन करते हैं, वह उपभोक्ता के लिए सही माप के हों एवं आरामदायक हों। डिज़ाइनर अपने उद्देश्यों के अनुसार आंकड़ों एवं रेखा–चित्रों का उपयोग करते हैं, जिसमें मानवजाति के सभी आयु वर्गों, मापों इत्यादि के परिमाप शामिल होते हैं। ऐसा करना डिज़ाइनरों की एक आवश्यकता है, इस बात का ध्यान रखने के लिए कि उपभोक्ता किस प्रकार उत्पाद अथवा सेवा के प्रति परस्परता स्थापित करेंगे। उपयोग एवं दुरुपयोग एक महत्त्वपूर्ण चिंता का विषय है।

विभिन्न आबादियों के बीच मानवमितिक आंकड़ों के संग्रहों में महत्त्वपूर्ण ढंग से विविधता पायी जा सकती है। इन आंकड़ों के संग्रहों में यह विविधता समग्र रूप से फ़ैशन उद्योग में मांग करने वाले बाज़ारों में परिधानों के मापों की शृंखला पर प्रभाव डालती है।

अपनी प्रगति जांचें

1. मानवमिति क्या है?

.....

.....

.....

.....

2. डिज़ाइन मानवमिति से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

उस स्थिति में जहां डिज़ाइन्स किसी कार्यबल के सामान्य मानवमितिक परिमापों के साथ प्रतिकूल होंगे, वहाँ पर अवांछित घटनाएँ घट सकती हैं। अपर्याप्त फिटिंग के व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों का उपयोग करके, कामगारों को स्वास्थ्य एवं क्षति की दृष्टि पर्याप्त सुरक्षा नहीं उपलब्ध की जा सकती है (कुतुब्बुद्दीन एवं अन्य, 2012)। वह शोधकर्ता जो सामान्य कामगार आबादी की सुरक्षा के लिए काम कर रहे हैं, वह सैन्य कर्मचारियों के उन अध्ययनों से निकाले गए आंकड़ों का उपयोग करते हैं जहां मानवमितिक आंकड़ों का अभाव रहा (कुतुब्बुद्दीन एवं अन्य, 2012)। वहीं दूसरी ओर, विविध कार्यबल आबादियों के बीच पर्याप्त रूप से मानवमितिक असंगति विद्यमान है, तथा वह मानक सैन्य आबादी से कुछ हद तक भिन्न हैं। श्रमदक्षता शास्त्र (एर्गोनामिक्स) का ज्ञान एवं अन्य कार्य परिवेश के बारे में, उन उत्पादन इंजीनियरों को बहुत अधिक नहीं पता है, जो उत्पादन उद्योग में कार्यरत हैं। डिज़ाइनरों द्वारा उपयोग की जाने वाली उपलब्ध जानकारी भी बहुधा दुर्बलतापूर्वक प्रस्तुत की जाती है। इसलिए, डिज़ाइनर भी बहुधा कार्य प्रणालियों को तैयार करते समय अपने डिज़ाइनों में मानव ऑपरेटर की श्रमदक्षता आधारित जानकारी को एकीकृत करने में कठिनाई से जूझते हैं (फेयेन एवं अन्य, 2000)।

अपनी प्रगति जांचें

3. क्या आपको लगता है कि डिज़ाइनरों द्वारा जिस कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है, उसको नियंत्रित किया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

7.2.1 कार्यस्थल डिज़ाइन

अब, हम जानते हैं कि, श्रमदक्षता शास्त्र, मानवों के उपयोग के लिए मशीनों की इंजीनियरिंग तथा मशीनों को चलाने के लिए मानव कार्यों की इंजीनियरिंग से संबद्ध है (कुतुब्बुद्दीन एवं अन्य, 2012)। मानव विज्ञान का यह पहलू मुख्यतः मानव क्षमता एवं प्रतिबंधों के अनुकूल उपकरण अथवा मशीन, सुविधाएं एवं कार्य परिवेश को डिज़ाइन करने से संबन्धित है। श्रमदक्षता शास्त्र (एर्गोनामिक्स) के कुछ उद्देश्य हैं जो मानवजाति के लिए बहुत लाभदायक हैं। वह हैं (i) उस सक्षमता एवं प्रभावोत्पादकता का संवर्धन जिसके साथ कार्य किया गया है, तथा (ii) कामगार के स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं संतोष को बनाए रखना एवं संवर्धित करना (दास, 1987)। उद्योग जगत में

अपेक्षित उपयोगकर्ता के मानवमितिक परिमापों को कम महत्त्व देते हुए, कार्यस्थल अधिकतर एक असूचित ढंग से डिज़ाइन किया जाता है। किसी औद्योगिक कार्यस्थल को डिज़ाइन करते समय कामगारों के शारीरिक परिमाणों के उपयुक्त आंकलन द्वारा उत्पादन प्रभावशीलता तथा ऑपरेटर की शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति की जा सकती है। कार्यस्थल आयामों में किए गए छोटे से परिवर्तनों द्वारा कामगारों की उत्पादनशीलता तथा व्यावसायिक स्वास्थ्य एवं सुरक्षा पर पर्याप्त मात्रा में प्रभाव डाला जा सकता है। अनेकों स्वास्थ्य संबंधी खतरों का सामना करना पड़ सकता है यदि कार्यस्थल को अनुचित मुद्रा में करने के लिए डिज़ाइन किया जाए तो। यह निष्क्रीय मांसपेशियों के दर्द का कारण बन सकता है, जिसके परिणामस्वरूप अंततः गंभीर सीमित मांसपेशी शून्यीकरण हो जाता है, तथा इसलिए यह प्रदर्शन एवं निष्पादन में कमी का कारण बन जाता है (दास एवं सेनगुप्ता 1996)।

अपनी प्रगति जांचें

4. श्रमदक्षता शास्त्र को परिभाषित कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

5. कार्यस्थल की डिज़ाइनिंग में श्रमदक्षता शास्त्र के क्या उद्देश्य हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

6. क्या औद्योगिक कार्यस्थलों को मानवों के शारीरिक डिज़ाइन के अनुरूप होने की आवश्यकता है? व्याख्या कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

किसी औद्योगिक कार्यस्थल को डिज़ाइन करने के लिए जो सबसे महत्त्वपूर्ण बात है, वह है कार्य प्रदर्शन, उपकरण, काम करने की मुद्रा एवं परिवेश से संबन्धित जानकारी को एकत्रित करना। इस प्रकार की जानकारी को एक नए कार्यस्थल को डिज़ाइन करने की स्थिति में समान परिस्थिति वाले कार्य/उपकरण के माध्यम से एकत्रित करना लाभदायक सिद्ध होगा (दास एवं सेनगुप्ता 1996)। इस उद्देश्य के लिए अनेकों विधियाँ, जैसे प्रत्यक्ष अवलोकन, अनुभवी ऑपरेटरों के साथ एकल साक्षात्कार, विडियो

टेप बनाना तथा प्रश्नावलियों का उपयोग भी किया जा सकता है। उद्योग जगत में कार्यस्थल को पुनः डिज़ाइन करने से पूर्व मानक एवं उपयुक्त प्रश्नावलियों का उपयोग करते हुए कामगार सर्वेक्षण किया जाना चाहिए ताकि यह मौजूदा उपकरण अथवा प्रणाली डिज़ाइन के कर्मचारी सुविधा, स्वास्थ्य एवं उपयोग की सुगमता संबन्धित परिणाम को स्थापित करने में सहायता कर पाएँ। इसी प्रकार का सर्वेक्षण विभिन्न उपकरण/प्रणाली डिज़ाइन एवं परिवेश संबन्धित कारकों जैसे शोर, तापमान, प्रकाश एवं कार्यस्थल के सामान्य ऑपरेटर मूल्यांकन के दस्तावेजीकरण अथवा रिकॉर्डिंग करने में सहायक होंगे; काम के कारण उत्पन्न ऑपरेटररों के शारीरिक, मानसिक एवं दृष्टि संबन्धित थकान के मौजूदा स्तर दिन के दौरान विशिष्ट शारीरिक अंगों में मुद्रा संबन्धित असुविधा में परिवर्तित हो रहे हैं (कुतुब्बुद्दीन एवं अन्य, 2012)।

अपनी प्रगति जांचें

7. किसी कार्यस्थल का डिज़ाइन तैयार करने में किस प्रकार की जानकारी की आवश्यकता होती है? संक्षेप में स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

7.2.2 परिधान डिज़ाइनिंग

मानव शरीर की स्थिर एवं गतिशील अवस्थाओं, दोनों का ही अध्ययन मानवमिति में किया जाता है। मानवमितिक तकनीकों के उपयोग द्वारा प्राप्त किए गए शारीरिक परिमापन के आंकड़ों का उपयोग विभिन्न क्षेत्रों में किया जाता है। उन क्षेत्रों में, परिधान डिज़ाइन करना भी एक है। मानवमितिक आंकड़े परिधान उत्पादन में एक महत्तपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि इन आंकड़ों की आवश्यकता परिधानों को आरामदायक एवं सही फिट्टिंग में डिज़ाइन करने के लिए होती है (स्पाहू एवं अन्य, 2015)। सामान्यतः डिज़ाइनरों द्वारा परिमापन के लिए पारंपरिक विधि (एकल आयामी परिमापन) का उपयोग करते हुए प्राप्त किए गए मानवमितिक आंकड़ों का उपयोग किया जाता है। जीवन शैली में हुई उन्नति ने शरीर के माप एवं आकार में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सभी में पायी जाने वाली शारीरिक माप एवं आकार संबन्धित विविधता, श्रमदक्षता डिज़ाइन में तथा पहनावे में आराम एवं फिट्टिंग को संवर्धित करने में बहुत महत्त्व रखती है (डेकर एत एल 1999)। परिधान की फिट्टिंग को बहुधा उपभोक्ताओं द्वारा परिधान की गुणवत्ता अंकलन विधि के रूप में उपयोग किया जाता है (स्ट्राइडोम, 2006)। उद्योग जगत में पौशाक को डिज़ाइन एवं उसका उत्पादन करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया में माप सारणियों का उपयोग किया जाता है जो कि मानवमितिक आंकड़ों पर आधारित शारीरिक परिमापन का मानक होती हैं (गुप्ता एवं ज़कारिया, 2014)। सटीक मानवमीटिक आंकड़े एकत्रित करना एवं सही फिट्टिंग के साथ परिधान डिज़ाइन करना परस्पर अत्यधिक संबन्धित हैं। खराब फिट्टिंग वाले परिधान, जो कि अब एक प्रमुख मुद्दा बन गया है, नवीनतम मानवमितिक आंकड़ों के अभाव के परिणाम को दर्शाते हैं। अनेक विकसित देशों में प्रत्येक 15 से 20 वर्षो के

अंतराल पर सर्वेक्षणों अथवा प्रणालियों द्वारा मानवमितिक परिमापनों का मान्यकरण एवं अद्यतन किया गया है (उजेवीक, 2009)। इस आधुनिक संसार में 3D शारीरिक मॉडलों को अंकीकृत करने के लिए 3D आधारित प्रणाली के आविष्कार ने मानवमितिक अध्ययनों के इस ज्ञान की प्रभावशीलता में वृद्धि की है। इन वर्षों कम्प्युटर संबन्धित तकनीकों में तीव्र विकास एवं प्रसार ने अनेकों फुटकर व्यापारियों एवं डिज़ाइनरों को इस बात के लिए आश्वस्त कर लिया है कि इस सम्पूर्ण उद्योग का भविष्य पौशाक डिज़ाइन करने के सफल संचालन पर निर्भर करता है (गुप्ता एवं ज़कारिया, 2014)।

7.2.3 पादुका (शू) डिजाइनिंग

मानव के पाँव में 26 हड्डियाँ होती हैं तथा यह हमारे शरीर की एक लचीली संरचना है। जूते/पादुकाएँ अत्यावश्यक वस्तुएँ हैं जिनका उपयोग पाँव को ढकने एवं किसी प्रकार की क्षति से बचाये रखने के महत्त्वपूर्ण उद्देश्य के लिए किया जाता है। जूतों का डिज़ाइन पाँव के मानवमितिक परिमापों के आधार पर तैयार किया जाता है जैसे पाँव की लंबाई, पाँव की चौड़ाई, इत्यादि। जूतों के वह माप जो पाँव के मानवमितिक परिमापों पर आधारित नहीं होते हैं, पाँव को आघात पहुंचाएंगे एवं यहाँ तक कि क्षति भी कर सकते हैं। जूते के अनुपयुक्त माप अधिक गंभीर समस्याओं का कारण भी बन सकते हैं जैसे पाँव की मांसपेशियों एवं जोड़ों में खिंचाव (लुक्षिमोन एवं अन्य, 2005)। पाँव को क्षति से बचाने के लिए, लोग जूते एवं जुराबें उपयोग करते हैं। इस बात का ध्यान रखना बहुत महत्त्वपूर्ण है कि जूतों का हमारे दैनिक जीवन में बहुत महत्त्व है। इसलिए माप का मानकीकरण, जूता एवं जुराब उत्पादन में एक महत्त्वपूर्ण विषय बन गया है। लोगों को उनके आराम एवं फिट्टिंग के अनुसार विभिन्न मापों का चुनाव करने की सुविधा प्रदान करने के लिए एक मानक माप को विकसित करना अनिवार्य है। ऐसा करना उपभोक्ताओं को व्यापक आधार पर संतुष्ट करेगा (उजेवीक एवं हर्ज़नजॅक, 2004)। पाँव संबन्धित मानवमितिक परिमाप, जिनका उपयोग जूते एवं जुराबों को डिज़ाइन करने में होता है, वह किसी विशिष्ट आबादी के नमूने का प्रतिनिधीत्त्व करने में समर्थ होने चाहिये जैसे, बच्चे, जवान अथवा बुजुर्ग (बारी एवं अन्य, 2010)। उदाहरण के लिए, जूतों, कपड़ों के माप, इत्यादि पर आयु, लिंग, प्रजाति, क्षेत्र, देशों इत्यादि के कारण प्रभाव पड़ता है, इसलिए विभिन्न स्थानों के लिए अनेक विविधताओं के कारण माप भिन्न भिन्न होंगे।

अपनी प्रगति जांचें

8. ऐसे कुछ कारकों का उल्लेख कीजिये जो जूतों एवं कपड़ों के माप को प्रभावित करते हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

7.3 शरीर–क्रियात्मक मानवविज्ञान

शरीर क्रियात्मक मानवविज्ञान, शारीरिक मानव विज्ञान की एक उप–शाखा है। 1960 के दशक के अंत तक, मानव विज्ञान का यह विषयक्षेत्र एक मौज़ेक जैसी संरचना के रूप में विकसित होता रहा था। इस विज्ञान की सैद्धांतिक संकल्पनाओं के महत्त्वपूर्ण तत्त्व, इस विभिन्नता के कुछ भागों के साथ निर्मित होने लगे थे। व्यक्तिगत जीवविज्ञान प्रक्रिया एवं आबादी आधारित जीवविज्ञान प्रक्रिया शारीरिक मानव विज्ञान अनुसंधान से संबद्ध हैं। व्यक्तिगत सोच का महत्त्व एवं आवश्यकतावादी धारणा, जैसे कि, आदर्श व्यक्ति तथा जो वर्तमान में यह समझते हैं कि सभी आबादियाँ बहुलप्ररूपी हैं जो इन प्रक्रियाओं का उपयोग करते हुए शारीरिक मानवविज्ञानियों के माध्यम से सचेत हो गयी हैं। शारीरिक मानव विज्ञानियों ने सूचकशब्दों के एक संग्रह की रचना की, जिसमें अपने विज्ञान के वैचारिक ढांचे के विकास की विशेषताओं को सम्मिलित किया। यह सूचक शब्द हैं, तकनीकी अनुकूलन क्षमता, पर्यावरणिक अनुकूलन क्षमता, कार्यात्मक संभावना, सम्पूर्ण शारीरिक समन्वय तथा शारीरिक बहुलप्ररूपवाद।

7.3.1 सूचक शब्दों (की वर्ड्स) की व्याख्या

हम विज्ञान एवं तकनीक को अपनी उत्तरजीविता रणनीतियों के रूप में चुनते हैं, जिनके प्रति अब हमें और अधिक अनुकूलता बढ़ाने की आवश्यकता है (बेकर, 1984; इवानगा एत एल 2005)। इस प्रकार की क्षमता को शारीरिक मानव विज्ञानियों द्वारा तकनीकी अनुकूलन क्षमता के रूप में जाना गया। यह एक कारक है जिसका मानव जाति के भावी जीवन परिवेश पर एक महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकता है। यह अनुकूलन क्षमता हमारे कृत्रिम परिवेश के एक व्यापक क्षेत्र को शामिल करती है। कुछ उदाहरण हो सकते हैं जैसे शहर, आवासन, कम्प्युटर, परिवहन, दूरसंचार, परिष्कृत सूचना प्रणालियाँ इत्यादि, जो कि आधुनिक जीवन के लिए अपेक्षित हो गए हैं। निकट भविष्य में, मनुष्यों को अन्तरिक्ष अड्डे के अनुसार जीवन का अनुकूलन करना पड़ सकता है (इवाङ्गा, 2005)।

कार्यात्मक संभावना को अधिकतम कार्यात्मक क्षमता का अल्पज्ञता आधारित अस्पष्ट अथवा अव्यक्त, घटक के रूप में परिभाषित किया गया है। एक समन्वित प्रतिक्रिया द्वारा कुछ निश्चित तनावों के विरुद्ध एक समस्थिति बनाए रखी जाती है, जिसमें शरीर की कार्यात्मक अनुकूलन प्रणाली संलिप्त होती है (यासुकाऊची, 2012)। पर्यावरणिक कारकों का प्रभाव अधिक अभिघटय प्रकृति वाला होता है, यद्यपि शारीरिक बहुलप्ररूपवाद जीन एवं पर्यावरणिक कारकों से प्रभावित होता है (यासुकाऊची, 2012)। संशोधन प्रणाली, व्यक्त क्रियाओं तथा विविध उप–प्रणाली एवं तत्त्व क्रियाओं से जनित नतीजों के वितरण के विस्तार द्वारा निर्मित एवं प्रभावित होती है। यह सब मिलकर समूहिक रूप से समकालिक प्रतिक्रियाओं के निश्चित स्वरूप को ढाल देती है, तथा जहां पर समन्वय प्रणाली सार्वभौमिक होती है, इसे सम्पूर्ण शारीरिक समन्वय के रूप में जाना जाता है (यासुकाऊची, 2012)। हम शारीरिक बहुलप्ररूपवाद, कार्यात्मक संभावना एवं सम्पूर्ण–शारीरिक समन्वय की इन तीन संकल्पनाओं को समूहों की अनुकूलन क्षमता के दृष्टिकोण से पर्यावरणिक अनुकूलन क्षमता एवं तकनीक अनुकूलन क्षमता पर चर्चा करने के लिए उपयोग कर सकते हैं, जिससे हम मानव विविधता की प्रकृति एवं इसके अर्थ पर विचार कर सकते हैं (यासुकाऊची, 2012)।

शारीरिक मानव विज्ञान धीरे धीरे विकसित हो रहा एक विज्ञान है। इसका उद्देश्य व्यापक अर्थ में मानव शारीरिक विशेषताओं को स्पष्ट करना है। इस संदर्भ में यह देखा गया है कि शारीरिक मानव विज्ञान मौलिक प्रकृतिक विज्ञानों के साथ सटीक बैठता है। हालांकि, व्यावहारिक विज्ञान एवं निर्माण उद्योगों समेत अन्य अनेक क्षेत्रों से मिले अनुसंधानों के प्राथमिक नतीजों को मानवीय विशेषताओं से संबन्धित महत्त्वपूर्ण जानकारी के लिए संग्यान में लिया गया है। इस प्रवृत्ति को जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए मानवीय क्षमताओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए सामाजिक आवश्यकताओं के एक प्रतिबिंब के रूप में देखा जा सकता है। यह हमारे पूर्वजों के लिए सम्पूर्ण रूप से एक अकल्पनीय बात होती कि आज अधिकतर मनुष्य समसामयिक तकनीकी सभ्यता में रहते हैं। शारीरिक मानव विज्ञान को संसार में मानव क्षमताओं के बारे में जानकारी के एक अत्यावश्यक स्रोत के रूप में देखा जा रहा है, जो इतिहास में कभी नहीं देखा गया (साटो, 2005)।

वैज्ञानिक उन विभिन्न विषयक्षेत्रों की श्रृंखला में शोधकार्य करने में संलिप्त हैं जो मानव अनुसंधान करने से सबंधित हैं तथा जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने का लक्ष्य रखती हैं। उनमें से, शारीरिक मानव विज्ञान क्षेत्र में किए जा रहे विभिन्न व्यावहारिक शोधकार्य विशिष्ट प्रतीत होते हैं चूंकि इसका दृष्टिकोण मानव शारीरिक विशेषताओं का उपयोग करना है। ऐसा कहा जा सकता है कि शारीरिक मानव विज्ञान में विकास की दर मात्र सामाजिक आवश्यकताओं के कारण ही नहीं बढ़ रही है अपितु इस विज्ञान की अवधारणा एवं कार्यप्रणाली में हुई नवीन उन्नतियों के कारण भी है (साटो, 2005)।

अपनी प्रगति जांचें

9. तकनीकी अनुकूलन क्षमता क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

7.4 किनांथ्रोपोमेट्री और इसके उपयोग

किनांथ्रोपोमेट्री शारीरिक मानव विज्ञान का एक विशिष्ट उप–विषय है जो खेलकूद के अध्ययन से संबद्ध है। शारीरिक मानव विज्ञान की यह शाखा परिपक्वता, पोषण एवं शारीरिक संरचना को ध्यान में रखते हुए सकल मोटर कार्यों अथवा काम करने की क्षमता के संबंध में, किसी व्यक्ति विशेष की शारीरिक संरचना के विषय पर चर्चा करती है। बिल रॉस ने किनांथ्रोपोमेट्री की संज्ञा 1972 में दी। विभिन्न खेल–कूद गतिविधियों में किसी व्यक्ति विशेष के प्रदर्शन में विभिन्न कारकों की भूमिका होती है। यह सभी कारक इसके बदले में आनुवांशिक संरचना एवं परिवेश, दोनों पर निर्भर करते हैं। वहीं दूसरी ओर, यह बात प्रश्न के दायरे से बाहर है कि, किसी व्यक्ति विशेष में जीन एवं पर्यावरण के बीच परस्परता के परिणामस्वरूप अवलोकन योग्य चरित्रों के विकास में आनुवंशिकी की अधिक बड़ी भूमिका होती है, जिसे बहुलप्ररूपता भी कहा जाता है। किसी खिलाड़ी की उपलब्धि के लिए उत्तरदाई मुख्य कारक होते हैं

माप, शरीर, शारीरिक संरचना, चयापचय दर, शक्ति, वेग एवं कौशल, हृदय–वाहिकीय अनुकूलन क्षमता इत्यादि में बहुलप्ररूप विभिन्नताएँ। कुछ पर्यवेष्टक कारक जैसे प्रशिक्षण एवं अभिप्रेरण किसी खिलाड़ी के आनुवांशिक प्रारूप को कुछ सीमा तक आकार दे सकते हैं।

खिलाड़ियों के लिए पहले से आवश्यक विशेषताओं को स्थापित करने में किनांथ्रोपोमेट्री शोधकार्यों का मौलिक महत्त्व है, ताकि वह अधिकतम प्रदर्शन कर पाएँ। आधुनिक खेलों में, खिलाड़ियों के किनान्थ्रोपोमेट्रिक गुणों से संबन्धित विस्तृत जानकारी का होना निश्चित रूप से महत्त्वपूर्ण है। चूंकि अधिकतर किनान्थ्रोपोमेट्रिक विशेषताओं का निर्धारण लगभग अनन्य रूप से आनुवांशिक आधार पर होता है, यह एक सर्वविदित तथ्य रहा है, जिसके परिणामस्वरूप, प्रशिक्षण के माध्यम से लंबाई एवं चौड़ाई परिमापों में परिवर्तन नहीं किया जा सकता (नोर्टन एवं ओल्ड्स 2001)। इसलिए, किसी विशेष खेल में खिलाड़ियों में उन स्पष्ट विशिष्टताओं का होना अनिवार्य है, जिनका लाभ उन्हे उस खेल के दौरान मिले (सोढ़ी एवं सिधु 1984)। स्वस्थ आनुवांशिक प्रारूप का चयन जो किसी व्यक्ति विशेष को अपनी अधिकतम क्षमताओं को प्राप्त करने में सहायक होगा, किनांथ्रोपोमेट्री का मुख्य केंद्र एवं लक्ष्य है। किनान्थ्रोपोलोजिस्ट उन व्यक्तियों का चुनाव करते हैं जिनके पास ऐसी आनुवांशिक संरचना है जो किसी खेल विशेष के लिए आदर्श है। किसी खेल विशेष में शारीरिक गतिविधियों को समन्वित करने के लिए मात्र मांसल शक्ति की ही आवश्यकता नहीं होती है। किसी खेल विशेष के लिए अन्य खिलाड़ियों की तुलना में ऐसे खिलाड़ियों का चुनाव करना जिनमें बेहतर क्षमताएं हैं, शारीरिक मानव विज्ञानियों के लिए एक मुख्य दायीत्त्व बन गया है चूंकि मात्र आनुवांशिक प्रारूप द्वारा निर्धारित संकीर्ण सीमाओं के भीतर रहकर ही प्रशिक्षण एवं अन्य बाहरी प्रभाव किसी की रूपात्मक स्थिति में परिवर्तन ला सकते हैं। शरिरिक मानव विज्ञानी आर्थिक तंगियों के दौरान भी सहायक सिद्ध हो सकते हैं, ऐसे व्यक्तियों पर किए जा रहे खर्च को कम से कम तक लाकर जिनकी अंथ्रोपोमेट्रिक मानक निम्न स्तर पर हैं एवं किसी खेल विशेष के लिए वह तुलनात्मक रूप से कम फिट हैं।

शारीरिक मानव विज्ञानी किसी खेल विशेष के लिए एक उत्तम व्यक्ति विशेष का चयन करने के लिए अपने पूरे विवेक को अमल में लाते होंगे। भिन्न जैव–रासायनिक निर्धारकों के गहन स्तर बनाए रखने के लिए आनुवांशिक प्रारूप की क्षमता को रूपांतरित करना, बल्कि एक तरह से अव्यावहारिक है। इस तरह, उत्तम नतीजे प्राप्त करने के लिए किसी व्यक्ति विशेष की, आनुवांशिक आधार पर निर्धारित रूपात्मक–शारीरिक विशेषताओं को अधिक महत्त्व दिया जाए। अतः, इस प्रकार हम यह जान पाये हैं कि किनांथ्रोपोमेट्री की तकनीकों ने मानव विज्ञानियों को मनुष्यों को विभिन्न सोमासोटाइप में श्रेणीबद्ध करने में तथा उनके लिए सही खेल की अनुशंसा करने में सक्षम बनाया। वह महत्त्वपूर्ण रूपात्मक विशेषताएँ जो खेलकूद के लिए अनिवार्य हैं, चूंकि वह शारीरिक संरचना के आधार पर खेले जाते हैं। कुछ शारीरिक संरचना जो पर्यावरणिक प्रभावों जैसे लिंग, सामाजिक–आर्थिक स्थितियाँ, व्यवसाय, आनुवांशिक बनावट, पोषण एवं व्यायाम मांसल को मिलाकर, कंकाल, वसायुक्त ऊतक पर निर्भर होती हैं। खिलाड़ियों की शारीरिक संरचना पर अध्ययन बहुत महत्त्वपूर्ण है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि कम वसा वाले लेकिन भारी मांसपेशियों वाले खिलाड़ी निश्चित प्रतिस्पर्धात्मक खेलों में अधिक बेहतर प्रदर्शन करते हैं, जबकि जिनमें पर्याप्त मात्रा में वसायुक्त ऊतक होते हैं उन्हे अपने स्थिर भार के कारण प्रवर्धित ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जो कूदने, दौड़ने इत्यादि गतिविधियों में आंतरिक बल के रूप में

प्रकट होता है। वसा की सीमित मात्रा जल आधारित खेलों में अतिरिक्त उछाल प्रदान करने में तथा प्रयुक्त आयामों में ऊष्मा क्षति को कम करने में, सहायक होती है। शारीरिक गठन एवं शारीरिक संरचना के अतिरिक्त, सोमासोटाइप विभिन्न खेलों में एक निर्णायक भूमिका निभाता है। ऐसा होने के कारण यह प्रशिक्षण, अभिप्रेरण कारकों एवं मानसिकता पर निर्भार करता है। खेलकूद उपकरणों को डिज़ाइन करने में किसी विशेष सोमासोटाइप के लिए मानवमितिक तकनीकों का उपयुक्त रूप से उपयोग करते हुए शारीरिक मानव विज्ञानी एक लाभदायक भूमिका निभाते हैं।

अपनी प्रगति जांचें

10. किनांथ्रोपोमेट्री की संज्ञा किसने दी?

.....

.....

.....

.....

.....

7.5 सारांश

इस इकाई में, आपने मानवमिति की मौलिक संकल्पना के बारे में जाना। हमने इस बात पर भी चर्चा की कि कैसे मनावमीति हमारे दिन प्रतिदिन के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। डिज़ाइनिंग के विभिन्न क्षेत्रों में डिज़ाइन मानवमिति के महत्त्व एवं सार्थकता की भी व्याख्या की गयी कि कैसे वह उपयोगी हैं तथा किन उद्देश्यों के लिए उन्हे मानवमितिक परिमापों में एक महात्त्पूर्ण स्थान दिया गया है। कार्यस्थलों, परिधानों, जूतों इत्यादि को डिज़ाइन करने के लिए मानवमितिक परिमापों की विश्वसनीयता पर भी संक्षेप में चर्चा की गयी। अनुपयुक्त अथवा गैर–फिट्टिंग के परिधानों की हानियाँ एवं व्यावसायिक खतरों, इत्यादि के बारे में भी इस इकाई में आपको सचेत किया गया। हमने अपने दैनिक उद्देश्य के लिए वर्तमान संदर्भ में शारीरिक मानव विज्ञान एवं किनांथ्रोपोमेट्री को समझने की आवश्यकता को भी जाना।

7.6 संदर्भ

Baker PT (1984) The adaptive limits of human populations. *Man* 19: 1–14.

D. Ujevic, Theoretical Aspects and Application of Croation Anthropometric System (CAS), Zagreb, Croatia: CAS Publication Series, 2009.

Das B, Sengupta AK. Industrial workstation design: a systematic ergonomics approach. *Applied Ergonomics.* 1996 Jun 1;27(3):157-63.

Das B. An ergonomic approach to designing a manufacturing work system.*International Journal of Industrial Ergonomics*. 1987 May 1;1(3):231-40.

Dekker L, Douros I, Buston BF, Treleaven P. Building symbolic information for 3D human body modeling from range data.InSecond International Conference on 3-D Digital Imaging and Modeling (Cat. No. PR00062) 1999 Oct 8 (pp. 388-397). IEEE.

Fernandez Jeffrey E. - Ergonomics in the workplace, *Facilities* Volume 13, Number 4, April 1995, 20–27.

Feyen R, Liu Y, Chaffin D, Jimmerson G, Joseph B. Computer-aided ergonomics: a case study of incorporating ergonomics analyses into workplace design. *Applied ergonomics.* 2000 Jun 1;31(3):291-300.

Gupta D, Zakaria N, editors. *Anthropometry, Apparel Sizing and Design*. Elsevier; 2014 Feb 15.

Iwanaga K, Liu X, Shimomura Y, Katsuura T (2005) Approach to human adaptability to stresses of city life.*J Physiol Anthropol Appl Human Sci* 24.

Iwanaga K. The biological aspects of physiological anthropology with reference to its five keywords.*Journal of physiological anthropology and applied human science.* 2005;24(3):231-5.

Luximon, A., Goonetilleke, R.S. and Zhang, M. (2005). 3D foot shape generation from 2D Information. *Ergonomics, 48*(6), 625-641.

Mascie-Taylor CG, Ulijaszek SJ, editors.*Anthropometry: the individual and the population*. Cambridge University Press; 1994.

Norton K, Olds T. Morphological evolution of athletes over the 20th century. *Sports Medicine*. 2001 Sep 1;31(11):763-83.

Qutubuddin SM, Hebbal SS, Kumar AC. Significance of anthropometric data for the manufacturing organizations.Int *J Eng Res Ind Appl* (IJERIA). 2012;5:111-26.

Ross WD, Hebbelinck M, Van Gheluwe B, Lemmens ML. Kinanthropométrie et l'apprétiation de l'erreur de mesure. *Kinanthropologie.* 1972;4:23-4.

Sato M. The development of conceptual framework in physiological anthropology.*Journal of physiological anthropology and applied human science.* 2005;24(4):289-95.

Sodhi HS, Sidhu LS.*Physique and selection of sportsmen: a kinanthropometric study*. Punjab Publishing House; 1984.

Spahiu T, Shehi E, Piperi E. Anthropometric studies: Advanced 3D method for taking anthropometric data in Albania. *computer*. 2015 Apr;4(4).

Strydom M, de Klerk HM. The South African clothing industry: problems experienced with body measurements. *Journal of Consumer Sciences*. 2006;34(1).

Ujevic, D. and Hrzenjak, R. (2004).Crotian anthropometric system. Paper presented at *First Congress of Ctorian Scientists from Croatia and Abroad, Zegreb – Vukovar*, November, 15-19.

Ujevic, D., Drenovac, M., Pezelj, D., Hrastinski, M., Narancic, N.S., Mimica, Z. and Hrzenjak, R. (2006).Croatian anthropometric system meeting the European Union.*International Journal of Clothing Science and Technology, 18*, 200-218.

Yasukouchi, A. Journal of Physiological Anthropology aims to investigate, how the speed of technological advance, experienced during the 21st century, is affecting mankind. Journal of Physiological Anthropology 2012 31:1.

7.7 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

1. अनुभाग 7.1 को देखें।
2. अनुभाग 7.2 के पहले एवं दूसरे अनुछेद को देखें।
3. अनुभाग 7.2 के दूसरे अनुछेद को देखें।
4. श्रमदक्षता शास्त्र मानवों के उपयोग के लिए मशीनों की इंजीनियरिंग तथा मशीनों को चलाने के लिए मानव कार्यों की इंजीनियरिंग से संबद्ध है। मानव विज्ञान का यह पहलू मुख्यतः मानव क्षमता एवं प्रतिबंधों के अनुकूल उपकरण अथवा मशीन, सुविधाएं एवं कार्य परिवेश को डिज़ाइन करने से संबन्धित है।
5. किसी कार्यस्थल को डिज़ाइन करने के लिए श्रमदक्षता शास्त्र के उद्देश्य होते हैं (i) उस सक्षमता एवं प्रभावोत्पादकता का संवर्धन जिसके साथ कार्य किया गया है, तथा (ii) कामगार के स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं संतोष को बनाए रखना एवं संवर्धित करना।
6. अनुभाग 7.2.1 के पहले एवं दूसरे अनुछेद को देखें।
7. अनुभाग 7.2.1 के तीसरे अनुछेद को देखें।
8. अनुभाग 7.2.3 को देखें।
9. अनुभाग 7.3.1 के पहले अनुछेद को देखें।
10. किनांथ्रोपोमेट्री की संज्ञा 1972 में पहली बार बिल रॉस ने दी थी।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY